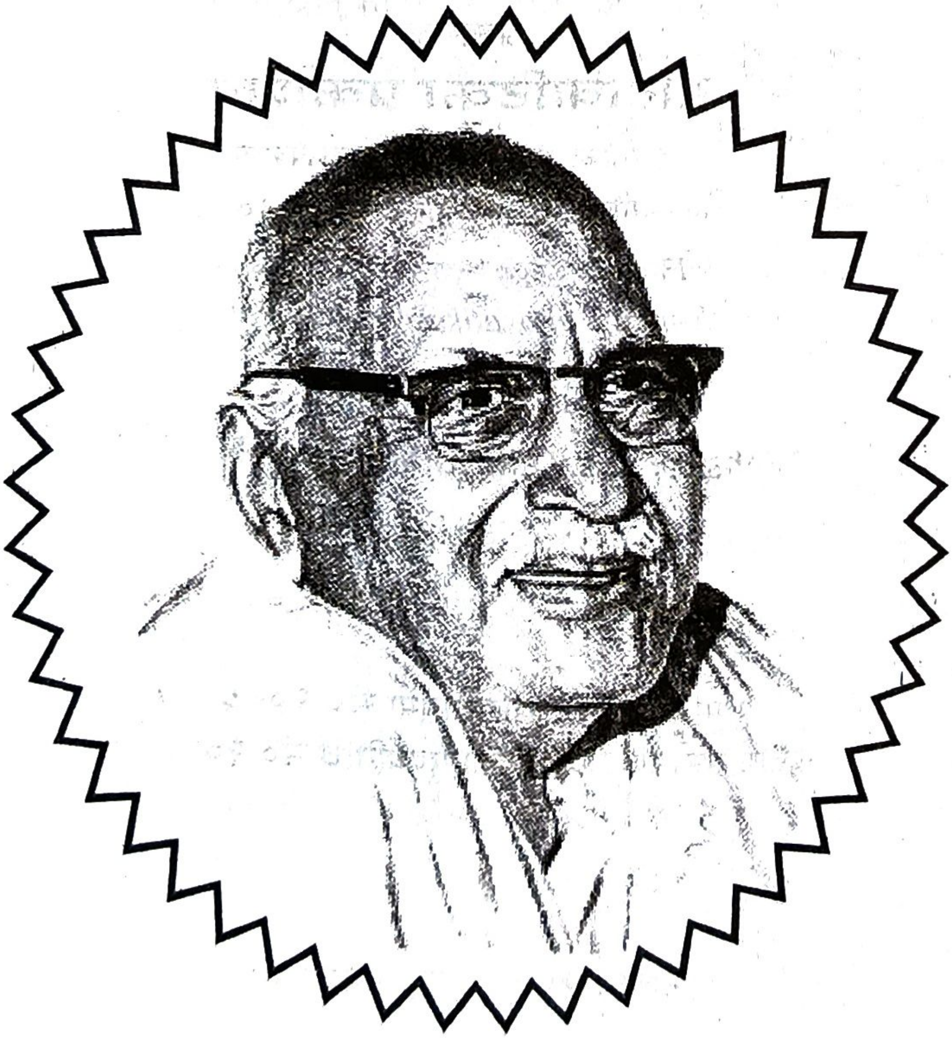
लोकपावन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार



गीतावाटिका प्रकाशन, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

लोकपावन भाईजी
श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार



गीतावाटिका प्रकाशन, गोरखपुर

Lokpawan Bhaiji

Shri Hanuman Prasad Ji Poddar

प्रकाशक

गीतावाटिका प्रकाशन

पद-रत्नाकर सेवा शोध संस्थानका प्रकल्प

पो०—गीतावाटिका, गोरखपुर-२७३००६

फोन : ९३३६४००२६७, ८८५३१४५४५२

E-mail : gitavatikap@gmail.com

गीता वाटिकाकी पुस्तकोंके हेतु

Website: www.gitavatika.com पर जायें।

प्रथम संस्करण : श्रीराधाष्टमी सं० २०६८ वि०

द्वितीय संस्करण : श्रीभाईजी पुण्यतिथि सं० २०८१ वि०

मूल्य : १५/- पन्द्रह रुपये मात्र

॥ श्रीहरिः ॥

नम्र-निवेदन

परम पूज्य श्रीभाईजीका १२५वाँ जयन्ती महोत्सव

इस समय हमलोग विशेष संकटमें हैं। हम अपने मानव जीवनके लक्ष्यको भूल गये हैं। भगवान्‌की जगह 'भोग' प्रधान हो गया है। अपने देशमें, विश्वमें नाना प्रकार के संकट छाये हुए हैं। पूज्य भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारने इस संकटसे उबरनेका अमोघ उपाय बताया है—विश्वासपूर्वक भगवदाराधन। भगवदाराधन करके हम सच्चे अर्थमें सुखी हो जायँ और देशमें, विश्वमें सर्वत्र शान्तिका साम्राज्य स्थापित हो जाय यह चेष्टा विश्वासपूर्वक आराधन करके करनी है। इसका परिणाम अवश्य ही अनुकूल होगा। इसका उदाहरण एक सच्ची ऐतिहासिक घटना है।

सन् १९६२ में हमारे पड़ोसी देश चीनने भारतपर अत्याचारसे विश्वासघातपूर्ण भीषण बर्बर आक्रमण किया। अपने देश भारतपर महान् संकट छा गया था। अत्याचारी चीनकी सेनाने पूरे आसामको घेर लिया। चीनी सेनायें तेजपुरतक आ गयी थीं। हमारी क्या दशा थी ? शत्रु यहाँ नहीं आ सकेगा ऐसी सम्भावना लेकर हमारे सैनिक बैठे थे। परन्तु अचानक चीनी सेना वेगसे बढ़ जाती और हम अपने सामान और हथियारोंको भी बचा नहीं पाते। हमारे सैनिक बन्दी बना लिये जाते।

उस महान् विपत्तिके समय पूज्य भाईजीने देशवासियोंका आह्वान किया। उन्होंने 'कल्याण' में निवेदन किया, ''इस भयानक संकटकालमें हम सर्वशक्तिमान् भगवान्‌का आश्रय लेकर आध्यात्मिक साधनोंमें जुट जायें। अतएव वैदिक यज्ञ, भगवान् रुद्र, दुर्गा, गणेश और नारायण आदिकी उपासनामें लग जाना चाहिये। चण्डी-पाठ, महामृत्युंजयके जाप, 'कल्याण' में प्रकाशित शिव-कवच और नारायण-कवच आदिके पाठ और गायत्री-जप पुरश्चरण आदि

करने-कराने चाहिये। और न हो तो जन-जनको 'हरिः शरणम्', 'नमः शिवाय', 'गं गणपतये नमः', 'दुर्गायै नमः', 'नमो नारायणाय' आदि मंत्रोंका अपने-अपने विश्वासके अनुसार जप तथा श्रीरामचरितमानस और वाल्मीकीय रामायणके पाठ करने-कराने चाहिये। कम-से-कम सभी लोग सर्वविघ्नविनाशक और सर्वकल्याणप्रद भगवन्नामका जप-कीर्तन तो अवश्य करें। करोड़ों कण्ठोंसे निकलनेवाली 'हरिनाम' की पवित्र और तुमुल ध्वनिसे आकाश और दिशाएँ गूँजती रहें। सारा वातावरण नाम-ध्वनिसे भर जाय। जैन, बौद्ध, सिख आदि महानुभाव भी अपने-अपने सिद्धान्तानुसार भगवान् की प्रार्थना करें।

"साथ ही अपने-अपने धर्म, सम्प्रदाय और मतके अनुसार ईसाई, मुसलमान, पारसी सभी भगवानसे प्रार्थना करें, जिससे धर्मप्राण भारतकी पूर्ण विजय हो। अधर्मका नाश हो, जगत्के राष्ट्रनायकोंको सद्बुद्धि प्राप्त हो, जिससे विश्वका भीषण संकट टले और समस्त विश्वमें शान्ति तथा प्रेमका विस्तार हो।"

भाईजीके इस निवेदनका अद्भुत प्रभाव पड़ा। सम्पूर्ण देशमें जगह-जगह भगवन्नाम जप, कीर्तन, प्रार्थनाएँ एवं अनुष्ठान होने लगे। हजारों हृदयोंसे निकली प्रार्थना भगवान् ने सुनी।

भाईजीने कहा—'मेरा विश्वास है—उस समय देशभरमें जो देवाराधन हुआ-चीनसे त्राण पानेके लिये, उससे चीनकी बुद्धि बदली, नहीं तो रातों-रात उसकी बुद्धिमें यह क्यों आया कि युद्ध को विराम दे दिया जाये। मेरा अपना विश्वास है कि यह सब भगवान्के आराधनका-भगवत्प्रार्थनाका प्रभाव था। भगवदाराधन भगवत्प्रार्थना एक अमोघ उपाय है।'

हम भी यह निश्चय करें कि श्रीभाईजीकी प्रत्येक जयन्ती महोत्सव तक उपरोक्त साधनोंमेंसे जो रुचिकर हो उसे श्रद्धा-विश्वासपूर्वक नियमित करें। ऐसा करना श्रीभाईजीके प्रति हमारी सच्ची स्मरणाञ्जलि होगी। इससे हमें तो लाभ होगा ही, देशमें भी सुख शान्ति होगी।

लोकपावन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

संत भगवत्स्वरूप होते हैं और उनके पवित्र जीवनसे नित्य-निरन्तर भगवद्-रसकी विश्वपावनी अखण्ड सुधा-धारा प्रवाहित होती रहती है, जो जगत्के जीवोंको मृत्युके भीषण पाशसे मुक्तकर अमृतत्व प्रदान करती है। वे संत ज्ञानके ज्योति:पुञ्ज होते हैं और अपने दिव्य प्रकाशसे तमोमय प्राणियोंके अज्ञानान्धकारको दूरकर उन्हें परमात्माके परम प्रकाशमय स्वरूपमें पहुँचा देते हैं। ऐसे संत जहाँ होते हैं, वह देश धन्य है; जिस जातिमें होते हैं, वह जाति धन्य है; जिस कुल-परिवारमें होते हैं, वह परिवार धन्य है और जिस कालमें होते हैं, वह काल धन्य है। वस्तुत: ऐसे भगवत्स्वरूप संतोंका जीवन जगत्के जीवोंके कल्याणार्थ ही उत्सर्गीकृत होता है। उनका अपना कोई प्रयोजन नहीं रहता शरीरसे—जीवनसे। जितने दिन प्रारब्धवश उनका भौतिक शरीर रहता है, उनके द्वारा सहज ही जगत्के जीवोंका कल्याण होता रहता है। ऐसे संत वास्तवमें जाति, सम्प्रदाय, देश आदिकी सीमासे बाहर पहुँचे हुए या इस जागतिक प्रपञ्चके स्तरसे बहुत ऊपर उठे हुए होते हैं। इसीसे वे समदर्शी, समतास्वरूप और निरपेक्ष सर्वकल्याणकारक होते हैं। वे अपने परायेका भेद न रखकर सबमें भगवान्के दर्शन करते या सबमें आत्मोपलब्धि करते हैं एवं सबको सुख पहुँचाने तथा सबका हित करनेकी सहज चेष्टा उनके द्वारा होती रहती है। वे अत्यन्त विरक्त होते हुए ही सहज ही जन-कल्याणमें प्रवृत्त रहते हैं—उनका जीवन ही सहज जन-

कल्याणस्वरूप होता है। ऐसे ही संत अपने अस्तित्वमात्रसे विश्व-कल्याणके कारण हुआ करते हैं।

सृष्टिके अनादि प्रवाहमें असंख्य संत हो चुके हैं, जिनमेंसे अधिकांशके नाम भी विस्मृतिके गर्भमें लीन हो गये हैं। जितने महापुरुषोंका आंशिक जीवनवृत्त इतिहासके पन्नोंमें सुरक्षित है, उनका जीवनक्षेत्र अधिकांशमें एक देशीय अथवा सीमित ही रहा है। उनमेंसे कोई ज्ञानी, कोई भक्त, कोई कर्मठ, कोई विरक्त, कोई समाजसेवी, कोई भजन परायण, कोई उपदेशक, कोई विद्वान, कोई कवि, कोई लेखक, कोई विचारक, कोई वक्ता, कोई अपरिग्रही, कोई दानी और कोई सर्वथा अहिंसक रहे हैं। ऐसे संत जगत्में बहुत कम हुए हैं, जिनका जीवनक्षेत्र बहुमुखी अथवा व्यापक रहा हो। सर्वभूतसुहृद स्वनामधन्य भगवत्स्वरूप भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारका व्यक्तित्व ऐसा था जो उपरोक्त दृष्टियोंसे समृद्ध था।

'भाईजीके जीवनमें तीन ऐसी बातें परिलक्षित होती हैं जो उन्हें अन्य संतोंसे एक अलग विशिष्ट स्थान देती हैं।

पहली बात पू० भाईजीको विष्णु भगवान्‌के साक्षात् प्रथम दर्शन हुए आश्विन कृष्ण ६, वि०सं० १९८४ (१६ सितम्बर १९२७) को जसीडीहमें १५ महानुभावोंकी उपस्थितिमें।

यह एक अध्यात्म जगत्‌की अनोखी घटना है जिसने स्वयं भाईजीको विस्मयमें डाल दिया। दूसरी ऐसी घटना फिर तीन दिन बाद १९ सितम्बर १९२७ को उसी स्थानपर हुई। जब भाईजी स्वयं इसका मर्म नहीं समझ पाये तो श्रीसेठजी श्रीजयदयालजी गोयन्दकासे पूछा कि जो कार्य एकान्तमें होता है वह इतने लोगोंके समक्ष क्यों हुआ ? श्रीसेठजीने यही उत्तर दिया कि इससे जगत्‌को लाभ ही होगा। यह काम समझकर ही हुआ है। जिसके द्वारा भगवद्भक्तिके प्रचारकी अधिक संभावना होती है, उसीको भगवान् इस प्रकार दर्शन देते हैं। इसके बाद गोरखपुर आनेपर चार बार साक्षात् एवं वार्तालाप हुआ जिसका वर्णन भाईजीकी डायरी एवं श्रीसेठजीको लिखे

पत्रमें मिला। आगे चलकर उनका श्रीराधाकृष्णकी लीलाओंमें प्रवेश हो गया जिसके लिये उन्होंने लिखा— 'मनमें शत-शत विचित्र लीलाएँ एवं श्रीराधाकृष्णकी रूप-माधुरी देखी, समझी और किसी-किसी लीलामें सम्मिलित होनेका सौभाग्य प्राप्त किया।'

अधिक विस्तार यहाँ न करके केवल इतना ही इंगित करना है कि जितने भी साकारोपासक संत हुए हैं उनको इष्टके साक्षात् दर्शन हुए ही हैं। विभिन्न कालोंमें अनेक स्मरणीय वन्दनीय संतोंका प्रादुर्भाव हुआ है और उनका उल्लेखनीय चरित्र-साहित्य विपुल और विशद है। अधिकांश संतोंके जीवन चरित्र प्रायः श्रद्धालु विद्वानों द्वारा ही लिखे गये हैं। यह कहा जाता है कि श्रद्धातिरेकमें लेखकोंने ऐसे वर्णन कुछ बढ़ा-चढ़ाकर लिखे हैं। इस बातको आंशिक स्वीकार भी करें तब भी उस विस्तृत वर्णनमें इतना प्रामाणिक विशद वर्णन नहीं मिलता है।

दूसरी बात है कि देवर्षि नारद और महर्षि अंगिराके मिलन की। नारद-भक्ति-सूत्रोंकी एक वृहद् व्याख्या भाईजीने शिमलापालमें अपने नजरबन्दीकी अवधिमें लिखी थी। यही व्याख्या कुछ परिवर्तन-परिवर्द्धनके साथ सन् १९३५ में गीताप्रेससे 'प्रेमदर्शन' के नामसे प्रकाशित हुई। संभवतः इस व्याख्यासे प्रसन्न होकर या अन्य निमित्तसे सन् १९३६ में देवर्षि नारदने महर्षि अंगिराके साथ गीतावाटिकामें पधारकर भाईजीको दर्शन दिये एवं लम्बी बात की। यह स्वयं भाईजीका बताया हुआ है। एक पत्रमें भाईजीने लिखा—'यहाँ जब अखण्ड हरिकीर्तन हुआ था, उस समय देवर्षि नारद तथा अंगिराजीके दर्शन हुए थे। बड़े सुन्दर, बड़े ही लाभप्रद। उन्होंने कुछ बड़ी उत्साहप्रद बातें बतायी थीं। यह सत्य है।' शास्त्रोंके जानकार सभी जानते हैं कि नारदजी एवं श्रीअंगिराजी ब्रह्माजीके पुत्र थे एवं सत्ययुग, त्रेता, द्वापर तीनों युगोंमें अनेक भक्तोंको दर्शन, प्रेरणा, उपदेश दिये थे। कलियुगके लगभग पाँच हजार वर्ष बीत चुके हैं। इस अवधिमें जितने संतोंका जीवनवृत्त इतिहासके पन्नोंमें उपलब्ध है उनमें विद्वान् लेखकोंने

जब छोटी-छोटी घटनाओंका विशद् वर्णन किया है तो नारदजीके दर्शनोंकी बात भी अवश्य लिखी होती परन्तु, ऐसा वर्णन कहीं मिलता नहीं है। यहाँ जिज्ञासा होती है कि ऐसी क्या विशेषता या प्रयोजन था जिसके लिये नारदजीको भाईजीसे मिलने मृत्युलोकमें आना पड़ा। वे यह भी कह गये जब याद करोगे हम आ जायँगे। दोनोंमें क्या बातें हुईं इसका विस्तृत प्रामाणिक वर्णन प्राप्त नहीं है पर भाईजीके आगेके जीवनसे ही उसका कुछ अनुमान लगाया जा सकता है।

तीसरी विशेष बात, भाईजीके जीवनके अन्तिम १०-१२ वर्षोंमें विशेषरूपसे देखनेको मिली। यद्यपि भाईजीका लीलाओंमें प्रवेश सन् १९४० से पूर्व हो गया था पर उन्होंने २० वर्षोंतक लोगोंसे छिपाये रखा। उसके बाद उनका पूरा प्रयास छिपानेका ही रहा पर श्रीकृष्णको यह मंजूर नहीं था। बड़ी विचित्र स्थिति थी, वस्तुतः नितान्त कल्पनातीत। वे चाहते थे वृत्तियाँ जागतिक धरातलपर रहें एवं 'कल्याण'के सम्पादन एवं अन्य सेवा कार्य सुचारु रूपसे चलते रहें। ऐसा सतत् प्रयास करनेपर भी बलात् वृत्तियाँ लीलामें विलीन हो जाती थीं। यह एक अद्भुत विवशता थी। अचानक शरीर सर्वथा निश्चेष्ट, निस्पन्द हो जाता। आँखें खुली हैं पर दिखायी नहीं देता। कलम हाथमें है तो नीचे भी नहीं रखी गयी मात्र श्वास-प्रश्वासके अतिरिक्त कोई क्रिया नहीं। यह स्थिति घंटों घंटों तक रहती थी। इसीको 'भाव-समाधि' विद्वानोंने कहना आरम्भ कर दिया। लीलाओंके दर्शन, लीलाओंमें प्रवेश कई ब्रजभावके संतोंके जीवनमें मिलता है। योगियोंकी जीवनीमें कई दिनों, महीनोंका ही नहीं वर्षोंकी समाधिके विवरण भी मिलते हैं। कई भक्तोंके ऐसे प्रसंग भी आते हैं कि साक्षात् भगवान्के प्रकट होनेपर भी उन्होंने सेवा अथवा भजन छोड़नेसे मना कर दिया। पर वृत्तियोंको संघर्षपूर्वक जगत्में लानेकी पूरी चेष्टा करनेपर भी बलात् न चाहनेपर भी लीला-सिन्धुमें निमग्न हो जाना और १५-२० घंटोंतक भाव-समाधिमें रहनेका विवरण कहीं भी पढ़ने-सुननेमें नहीं आता है।

यद्यपि प्राप्त विवरणोंके अनुसार अन्य कार्य करते हुए भी भाईजीका मन लीला राज्यमें ही विहरण करता था पर तल्लीनता घनीभूत न होनेसे दोनों कार्य सुचारु रूपसे चलते रहते थे। भाईजीके शब्दों में— 'अकस्मात् ऐसा हो जाता है कि इन्द्रियकी, मनकी सारी क्रियाएँ बन्द हो जाती हैं। जगत्का सर्वथा लोप हो जाता है, केवल प्राण चलते हैं। आँखें खुली हों तो भी दिखता नहीं। इसे समाधि कहिये या और कुछ। कभी-कभी तो वृत्तियोंको बलात्कारसे संसारमें लगानेकी चेष्टा करनेपर भी अकस्मात् ऐसा हो जाता है। पहले यह स्थिति कई दिनों बाद हुआ करती थी, अब तो बहुत जल्दी-जल्दी हो जाती है।

'यह कोई ध्यान या समाधि नहीं है जिसका अभ्याससे सम्बन्ध हो, न किसी क्रियाका ही फल है। यह तो उनकी अपनी लीलाकी एक विलक्षण स्फूर्ति है या उनकी लीलाकी लीला है—जो अत्यन्त दुर्लभ है। यही वास्तवमें ठीक-ठीक स्वरूपका साक्षात्कार होता है।'

पूज्य राधा बाबा (स्वामी चक्रधरजी महाराज) ने लिखा है— 'आजतक इस पारमार्थिक स्थितिका वर्णन मैंने किसी भी शास्त्रमें नहीं पढ़ा और चैतन्य महाप्रभुके सिवा किसी भी भक्तके जीवनमें इस स्थितिका संकेत प्राप्त नहीं होता।' पूज्य बाबा उद्भट विद्वान् थे एवं शास्त्रोंका अध्ययन उनका अति गहन था—यह सर्वविदित है। अब एक दृष्टि भाईजीके बहिरंग जीवनपर डालें।

भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारका जन्म १७ सितम्बर १८९२ ई० दिन शनिवारको शिलाँगमें हुआ था। इनके पिताका नाम श्रीभीमराज एवं माताका नाम रिखीबाई था। ये लोग मूलतः राजस्थानके चुरु जिलेके रतनगढ़ कस्बेके निवासी थे। लेकिन व्यापार कार्यसे शिलाँगमें रहने लगे थे। इनके जन्मके पूर्व ही उनकी दादी रामकौर देवीको एक महात्माने कहा था—'आजसे एक वर्षके अन्दर आपके एक सर्वगुण-सम्पन्न पौत्र होगा जो बहुत ही सुशील, विद्वान् और भगवद्भक्त होगा। जन्मके समय उसके मस्तकपर 'श्री' का निशान, कंधेपर केश और दाहिनी जाँघपर काले

तिलका निशान होगा। तथा वह साधारण बालकोंके समान जन्मके समय रुदन नहीं करेगा।' जन्मके समय ये सभी चिह्न उनके शरीरपर विद्यमान थे—यह देखकर सबको सुखद आश्चर्य हुआ। दादी रामकौर देवीने अपने ईष्टदेव—हनुमानजीका कृपा-प्रसाद मानकर इनका नाम 'हनुमान प्रसाद— रखा। इनकी अवस्था दो वर्ष भी नहीं हो पायी थी कि माताका देहान्त हो गया। इनका पालन-पोषण दादीने किया।

जब वे चार वर्षके थे तब शिलाँगमें भीषण भूकम्प आया और अपार धन, जनकी हानि हुई। जिस मकानमें ये थे वह मिनटोंमें ध्वस्त हो गया लेकिन उसीमें जहाँपर ये थे ईंट-पत्थरोंसे एक गुफा-सी बन गयी और उसीमें ये दबे रहे। बादमें ध्वंसावशेषसे दो फुफेरे भाई मरे मिले लेकिन इनको खरोंच भी नहीं आयी थी और इन्हें सकुशल निकाला गया।

श्रीहनुमान प्रसादजी पोद्दार युवावस्थामें देश-सेवा, समाजसेवाकी ओर प्रवृत्त हुए। स्वदेशी आन्दोलनमें शुद्ध खादी प्रयोगका व्रत ले लिये । क्रांतिकारी गतिविधियोंमें सक्रिय भाग लेनेके कारण श्री अरविन्द, श्रीसुरेन्द्रनाथ बनर्जी, श्रीविपिनचन्द्रपाल, श्रीचित्तरंजन दास आदिसे आपको अन्तरंगता मिली। क्रांतिकारी गतिविधियोंके कारण ही बंगालके बांकुड़ा जिलाके शिमलापाल ग्राममें आपको २१ माह तक नजरबंद रखा गया। नजरबन्दीके जीवनमें इनमें विलक्षण परिवर्तन हुए। शिमलापालका जीवन कठोर साधनाका बन गया। थोड़े ही दिनोंमें वृत्ति ध्येयाकार बनकर इतना सुन्दर ध्यान होने लगा कि तीन-तीन घंटे लगातार ध्यानमें बीतने लगे। आगे चलकर छः माहमें ध्यानका इतना अभ्यास हो गया कि खुली आँखोंसे जिस वस्तुके स्थानपर भगवान्‌की धारणा करते वहीं श्रीविष्णु भगवान्‌की मूर्ति दिखायी देने लगती। ध्यानके अलावा नाम जप एवं स्वाध्याय भी साधनाके अंग थे। इसी समय इन्होंने नारद-भक्ति-सूत्रोंकी हिन्दी टीकाकी जो आगे चलकर कुछ परिवर्तन परिवर्द्धनके साथ गीताप्रेस से 'प्रेमदर्शन' नामसे प्रकाशित हुई। इतनी छोटी उम्रमें प्रेमरूपा भक्तिकी

इतनी गम्भीर व्याख्या की कि वह चिरकालके लिये भक्तों, विद्वानों एवं साधकोंके लिये मननीय हो गयी। यह कितनी विलक्षण बात है कि बादमें स्वयं नारदजीसे वार्तालाप होनेके बाद और साधनाके सर्वोच्च शिखर पर पहुँचनेके बाद तथा इनके जीवनकालमें अनेकों संस्करण निकलनेके बाद भी इसमें किसी संशोधनकी आवश्यकता नहीं पड़ी।

नजरबन्दीसे छूटनेके बाद अगस्त १९१८ में आप व्यापार हेतु बम्बई आ गये। यहाँ भी देश सेवाकी भावना प्रबल होनेसे अनेकानेक रूपमें स्वतंत्रता आन्दोलनमें सक्रिय रहे और लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय, महात्मा गाँधी, पं० मदनमोहन मालवीय, सरदार वल्लभ भाई पटेल एवं विनायक दामोदर सावरकर, संगीताचार्य विष्णु दिगम्बरजी आदिसे घनिष्ठ सम्पर्क हुआ। सभीके द्वारा प्रेमपूर्वक आपको 'भाई' सम्बोधन करनेके कारण आपका उपनाम 'भाईजी' पड़ गया।

श्रीभाईजीके व्यक्तित्वका यह अनूठा आयाम है कि उनसे सम्पर्कित लोगोंका जितना भरोसा उनपर था उतना ही भरोसा इतरलोकके जीवोंका भी था। इसका सुन्दर उदाहरण है उनकी एक पारसी प्रेतसे मुलाकात। घटना इस प्रकार है—एक बार श्रीभाईजी बम्बईके चौपाटी पर संध्याके समय एक बेंचपर बैठकर जप कर रहे थे। वह स्थल बिल्कुल एकान्त था तथा प्रकाश न रहनेसे अंधेरा-सा था। अचानक सामने पारसी पुरोहितके पोशाकमें एक सज्जन खड़े दिखायी दिये। वे बहुत देरतक खड़े रहे तब भाईजीने कहा—साहेबजी! आप बैठ जाइये। खड़े-खड़े आपको बहुत देर हो गयी। इतना कहनेपर उन्होंने कहा— 'आप डरियेगा नहीं, मैं प्रेत हूँ।' अब भाईजी कुछ भयभीत हुए। उन्होंने फिर कहा—'आप डरिये नहीं, मैं आपका अनिष्ट नहीं करूँगा। मैं तो आपको धर्मात्मा मानकर सहायताकी याचना करने आया हूँ। आप मेरी सहायता कीजिये, आपका मंगल होगा। आप कृपा करके किसीको गया भेजकर मेरे लिये पिण्डदान करवा दें तो मेरी सद्‌गति हो जायेगी।' उन्होंने अपने घरका नाम पता बताया और भाईजीसे प्रेतलोक सम्बन्धी लम्बी बातचीत हुई। भाईजीने अपने आश्वासनके

अनुरूप एक सज्जन ब्राह्मणको गया भेजकर उनका पिण्डदान कराया। जिस दिन उनका गयामें पिण्डदान हुआ उस दिन फिर प्रेतने दर्शन देकर भाईजीसे कहा—'मैं आपके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने आया हूँ। आपने मेरा कार्य कर दिया। अब मैं प्रेतलोकसे उच्चलोकमें जा रहा हूँ।' आगे चलकर उन्होंने भाईजीकी बड़ी सहायता की और प्रेतलोक सम्बन्धी भाईजीको अनेकानेक जानकारियाँ दीं।

बम्बईके जीवनमें भाईजीकी साधनाकी लगन अद्भुत थी। वे साधनमें इतना तत्पर रहते कि रातमें दो-ढाई घंटेसे अधिक नहीं सोते । भगवन्नामनिष्ठाके फलस्वरूप ही उन्हें वनवेषधारी भगवान् राम, लक्ष्मण और सीताके दर्शन हुए और बातें हुईं। अन्य बातोंके अलावा भगवान्ने उनसे कहा—'किसी भी प्रकारसे नाम लेनेवालेकी सद्‌गति ही होगी।'

भगवान् अपने सच्चे भक्तकी कितनी सँभाल रखते हैं इसका एक उदाहरण भाईजीके बम्बई—जीवनकी एक घटना है। भाईजी किसी कार्यवश इन्दौरके पास महू नामक स्थानपर गये। वहाँ रात्रिविश्राम हेतु एक धर्मशालामें गये। वहाँके व्यवस्थापकने जगह न होनेसे वहाँ रुकनेसे मना कर दिया। भाईजीके अनुनय विनयका भी उसके ऊपर कोई असर नहीं हुआ। अन्ततः भाईजीने पासके एक अस्तबलके एक कोनेको साफकरके अपना बिस्तर लगाया। बिना खाये पीये थकानके कारण सोते ही नींद आ गयी। उधर धर्मशालाका मालिक जो धर्मपरायण व्यक्ति था उसको रात्रिमें स्वप्न हुआ कि भगवान् कह रहे हैं कि तुम्हारी धर्मशालाके पास जो अस्तबल है उसमें मेरा एक भक्त भूखा सो रहा है। तुम जाकर उसके खाने-पीने और ठहरने-सोनेकी समुचित व्यवस्था करो। उसकी नींद खुल गयी और सद्यःस्वप्नकी बात स्मरण करके गद्‌गद हो गया। प्रभुकी अद्‌भुत अनुकम्पा देखकर भाव विभोर हो गया। वह तुरन्त अस्तबल आकर भाईजीको जगाया और उन्हें अपने स्वप्नकी बात बताई। उसने कहा कि आपकी कृपासे आज मुझे भगवान्ने अपना लिया। फिर आग्रहपूर्वक अपने घर लाकर उनका यथोचित आतिथ्य सत्कार किया।

अपनी साधनाके मार्गपर उत्तरोत्तर आगे बढ़ते हुए भाईजीको भगवान्‌के दर्शनोंकी प्रबलोत्कण्ठा हुई।

एक लालसा मन महँ धारौं।

वंशीवट, कालिंदी-तट नटनागर नित्य निहारौं।

(पद-रत्नाकर, पद सं०/१०५२)

इसकी पूर्ति सितम्बर १९२७ में जसीडीहमें हुई। उस प्रथम दर्शनके भावोल्लासका प्रस्फुटन इस प्रकार हुआ—

जन्म जन्मसे लगी हुई थी जिनके दर्शनकी आशा।
रूप-सुधा वारिधि-अवगाहनकी, जिसकी थी अभिलाषा॥

× × × ×

भाग्यवती जिन आँखोंने वह देखी रूप-छटा अनुपम।
तृप्त हो गयीं, नहीं बता सकती हैं, वर्णनमें अक्षम॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/८५९)

भाईजीको भगवान् विष्णुके साक्षात् दर्शन कुछ साधकोंकी उपस्थितिमें हुई। यह अध्यात्म जगत्‌की सुदुर्लभ घटना थी क्योंकि भगवान्‌के दर्शन साधककी परिपक्वास्थामें और प्रायः एकान्तमें होने हैं। इसका रहस्य बादमें ज्ञात हुआ कि जिसके द्वारा भगवान्‌को अपना निज कार्य कराना होता है, उसीके साथ ऐसा होता है। कालान्तरमें यह सिद्ध भी हो गया क्योंकि जितना धर्म प्रचारका कार्य भाईजी द्वारा हुआ उतना इस कलियुगमें अद्वितीय है।

भाईजी अपने सम्पर्कमें आनेवालोंका योगक्षेम वहन करते। उनका हृदय परदुःख देखकर द्रवित हो जाता। यहाँतक कि जो इनके पास नहीं होते उनकी भी संभाल बिना बताये करते। वे भविष्य द्रष्टा थे। एक बार रामनाथजी 'सुमन' अत्यधिक आर्थिक कठिनाईमें थे। यहाँतक कि पत्नीके गहने भी बिक गये थे और दैनिक आवश्यकताकी वस्तुएँ जुटाना भी दुरुह हो गया। उन्होंने अपना आवास भी दूसरे शहरमें कर लिया था। तब अचानक एक दिन उन्हें डाकसे मनीआर्डर मिला जो उन्हें 'कल्याण'की

ओरसे भाईजीने भेजा था। यह उन्हें बड़े संकटकी घड़ीमें मिला और डूबतेको तिनकेका सहाराकी भाँति उन्हें सम्बल दिया। सुमनजीने लिखा है—'बिना लिखे, बिना कहे महीनोंसे जब पत्र-व्यवहार नहीं, मिलना नहीं, तब न जाने कैसे उन्हें ये सब मालूम हुआ, कैसे उन्हें मेरे तत्कालीन पतेका ज्ञान हुआ और उन्होंने बिना किसी भूमिकाके या पत्रके पर्देकी ओटमें छिपे दीनबन्धुकी भाँति रुपये भिजवाये। पूछनेपर वे हँस देते थे, कभी बताया नहीं।'

इसी प्रकार एक दूसरी घटना है। गोरखपुरके रियाज अहमद अंसारीका भाईजीसे प्रेम था। वे अपनी बीमारी और अन्य कारणोंसे अत्यन्त आर्थिक कठिनाईमें पड़ गये। स्थिति यहाँतक पहुँच गयी कि घरमें खानेको कुछ नहीं बचा। बच्चोंको भूखा देखकर इनकी सहनशक्ति समाप्त हो गयी। लेकिन इसपर भी इन्होंने भाईजीसे कोई याचना नहीं की। इन्हीं समस्याओंको झेलते हुए इन्होंने एक दिन आनेवाली रात्रिमें आत्महत्याका निर्णय ले लिया। वे बिस्तरपर लेटे थे कि किसीने दरवाजा खटखटाया। वे उठकर बाहर आये तो देखा भाईजी खड़े हैं। वे भाईजीको अन्दर कमरेमें ले गये। कुछ देर बाद भाईजीने आश्वासन देते हुए कहा—भाईसाहब! यह संसार दुःखालय ही है। यहाँ सभीको दुःख सहने पड़ते हैं और सच्चे लोगोंपर तो और कष्ट आते हैं, इसलिये कि भगवान् उनकी परीक्षा लेते हैं फिर भाईजीने एक लिफाफा उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा—आपको इसकी जरूरत है। इसे रख लीजिये। अस्वीकार करनेसे मुझे दुःख होगा। शीघ्र ही आपके व्यवसायके लिये मैं रुपयोंकी व्यवस्था करनेकी चेष्टा करूँगा। एक प्रार्थना और है—आपने आनेवाली रातमें अपने जीवनके साथ जो करनेका निश्चय किया है, वह ठीक नहीं है। जीवन भगवान्‌का दिया हुआ है और उसे समाप्त करनेका अधिकार उन्हींको है। आप अपने निश्चयको छोड़ दीजिये। उन्हें लगा मानो बिजली गिर पड़ी। उन्होंने सोचा कि मैंने अपने निश्चयके बारेमें किसीसे कुछ नहीं कहा था फिर भाईजीको कैसे पता लगा? अवश्य ही इनमें कोई दिव्य शक्ति है। वे उठ खड़े हुए और

बोले—भाईजी! आप इन्सान नहीं फरिश्ता हैं। आपको मेरे इरादेका कैसे पता चला? भाईजीने मुस्कुराते हुए कहा—आपके मनमें जो बात आई, इसकी स्फुरणा मेरे मनमें हो गयी। मुझे आज्ञा दीजिये, फिर मिलेंगे।

भाईजीको भगवान्‌के साक्षात्कार अपनी इच्छासे होते या भगवान् स्वयं कृपा करके जब कोई विशेष बात कहनी होती तो दर्शन देते। ऐसा ही एक अवसर था जब भाईजी घरके बाहर बैठे थे। अचानक किसीके द्वारा खिंचा खिंचा-सा जाकर कोठरीके अन्दर चले गये और किवाड़ बन्द कर लिये। स्वयं एक कुर्सीपर बैठ गये और किसीके बैठनेके लिये सामने एक कुर्सी रख लिये। अकस्मात् प्रकाश छा गया और महान् शान्ति सी प्रतीत होने लगी। तत्काल भगवान्‌का आविर्भाव हो गया। सामनेकी कुर्सीपर एक बार उनका चरण स्पर्श हुआ। फिर आकाशमें ही उनकी स्थिति रही। भगवान्‌की इस अयाचित कृपाको देखकर भाईजी आह्लादित हो गये फिर उनका भगवान्‌से वार्तालाप हुआ। भगवान्‌ने कुछ इस प्रकार बातें कहीं—

१. दर्शनोंकी बात गुप्त रखनेमें ही लाभ है।
२. धर्मके नामपर लड़नेवाले मेरा प्रभाव नहीं जानते।
३. पूरी गोरक्षामें अभी विलम्ब है।
४. मेरे अवतारका समय अभी बहुत दूर है।
५. जगत्‌का कुछ भला करना हो तो भेद छोड़कर नामका प्रचार कर। लोगोंसे कह दो कि इस कालमें नामसे ही सब हो जायेगा। मेरे अवतारमें भी नाम ही हेतु होगा।
६. जो लोग नामका सहारा लेकर पापको आश्रय देते हैं, उनको सावधानकर कि उनकी शुद्धि यमराज भी नहीं कर सकता।
७. पापोंका नाश तथा भोगोंकी प्राप्तिके लिये नामका प्रयोग करना मूर्खता है। पापका नाश तो फलभोग और प्रायश्चितसे भी हो जाता है। क्षणिक भोगोंकी तो परवाह नहीं करनी चाहिये। भोगोंके आने-जानेमें तो हानि ही क्या है!

८. नाम तो प्रियसे भी प्रिय वस्तु है। इसका प्रयोग तो इसीके लिये करना चाहिये ।

९. दम्भ बहुत बढ़ गया है। दम्भ मेरी प्राप्तिमें सबसे बड़ा बाधक है। दम्भियोंसे सावधान रह और उनको भी सावधान कर दे कि उनकी बुरी गति होगी। काम क्रोधसे भी दम्भ बुरा है।

१०. किसीको मेरे दर्शनोंका पक्का आश्वासन मत दे।

११. जसीडीहके सिवाय इन बातोंका मेरे नामसे प्रचार न कर।

१२. अब इस तरहसे नहीं आऊँगा। तेरे बिना बुलाये दो बार आ गया। मुझे ये बातें कहनी थीं इसलिये। जब चाहे स्मरणकर बुला सकता है, परन्तु भूल मत करना।

इसके बाद भगवान् अन्तर्धान हो गये। भाईजीकी उपरामता चालीस घंटे तक बनी रही।

भाईजीका जीवन साधनाकी प्रतिमूर्ति था। लोकोपकार प्रत्येक संतका ध्येय होता है। भाईजीमें यह विलक्षण रूपसे था। उनके पास व्यक्तिगत रूपसे कुछ भी नहीं था। परन्तु उन जैसा दानी मिलना कठिन है। वे दिन-रात खुले हाथोंसे बाँटते रहते थे, उनके द्वारसे कभी कोई खाली नहीं लौटता था। भगवान्की कृपासे भाईजीका भण्डार सदा भरा रहता था। जाड़ेके दिनोंमें ऊनी वस्त्रोंका वितरण करते थे। शीतऋतुकी ठिठुरती रात्रियोंमें जब हवा भालेकी नोंककी तरह प्रहार करती तब उस ठंडमें आर्त्त-सेवक भाईजी अपने बिछावनसे उठते और जीपमें ऊनी कम्बल इत्यादि भरकर सड़कके किनारे दीन-हीन ठिठुरते-काँपते लोगोंको अपने हाथोंसे ऊनी कम्बलोंसे उन्हें ढकते और तुरन्त उस स्थानसे हट जाते जिससे उन्हें पता भी नहीं चलता। ऐसी गुप्त सेवाका क्रम प्रतिवर्ष चलता। जाति, समाज अथवा धर्मका भेद तो कभी उन्होंने किया ही नहीं। उनका द्वार सभी जातियों, सभी वर्गों, सभी सम्प्रदायों एवं सभी धर्मावलम्बियोंके लिये खुला था। यद्यपि भाईजी कट्टर सनातनी हिन्दू थे, फिर भी सभी सम्प्रदायोंके प्रति उनकी आदर बुद्धि थी।

भाईजी अविचल सत्य-आग्रही व्यक्तित्वके धनी थे। इसके लिये वे किसी भी दूसरी बातको स्वीकार नहीं करते थे। इसका एक उदाहरण है। भाईजी सेठजी श्रीजयदयालजी गोयन्दकाको गुरुतुल्य मानते थे। उनकी बात को अन्यथा नहीं लेते। श्रीसेठजी कट्टर मर्यादावादी संत थे। जब 'कल्याण' के 'भागवतांक' प्रकाशनकी बात आयी तो उनका मत था कि भागवतके रासपञ्चाध्यायीको विशेषांकमें नहीं छापना चाहिये। उनके मनमें आशंका थी कि समाजके अभद्र तत्त्व इसका मनमाना अर्थ लगाकर समाजमें अनर्थकारी वातावरण उत्पन्न कर सकते हैं। इस बातपर भाईजीका सेठजीसे मतान्तर था। भाईजीकी गहरी आस्था एवं सुदृढ़ मान्यता थी कि रासपञ्चाध्यायी तो भागवतका पञ्चप्राण है। हम लोगोंको भगवान् वेदव्यासकी वाणीपर अविश्वास करनेका क्या अधिकार है? भले ही श्रीमद्भागवतका प्रकाशन न हो, पर यदि हो तो उसमें ये पाँच अध्याय अवश्य रहें। अपनी आस्था अभिव्यक्त कर देनेके बाद वे तटस्थ रहे और भागवतांकका प्रकाशन टलता रहा। कुछ वर्षोंके बाद सेठजीने भाईजीसे कहा—'हनुमान! मैं हारा, तुम जीते। अब भागवतांक प्रकाशित करो। हाँ, तुम चीर हरण-लीला और महारास-लीला पर अपनी टिप्पणी अवश्य दे देना।' यह भाईजीके सत्य-आग्रही स्वभावका अनुपम उदाहरण है जिससे विशाल भागवतांकका प्रकाशन हुआ और उसमें प्रकाशित चीर-हरण-लीला, महारास-लीला और माखनचोरी-लीलाकी टिप्पणी स्वरूप उनके विस्तृत लेख युगोंतक साधकोंको एक महान् आलोक प्रदान करते रहेंगे।

किसी संतके लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह विद्वान् अथवा लेखक भी हो। श्रीभाईजी परमोच्चकोटिके सन्त होनेके साथ उच्चकोटिके लेखक कवि, वक्ता एवं विचारक थे। यों तो संतके जीवन, उनके अस्तित्व, उनके श्वास-प्रश्वास, उनके दर्शन, स्पर्श एवं संभाषणसे, उनके शरीरका स्पर्शकी हुई वायुसे ही जगत्‌का मंगल होता है परन्तु श्रीभाईजीने अपने प्रौढ़ विचारों, अपनी ओजस्विनी वाणी, अपनी शक्तिशाली लेखनी एवं सरल सुबोध भावपूर्ण लेखोंसे असंख्य पथभ्रष्टोंको पथ दिखाया, जिज्ञासुओंकी

ज्ञान-पिपासा शान्त की, भक्तोंको भक्तिका मर्म समझाया व ज्ञानमार्गियोंको ज्ञानका रहस्य बताया। उनका साहित्य युगों-युगोंतक लोगोंका मार्गदर्शन करता रहेगा। उच्चकोटिके लेखक एवं शास्त्रमर्मज्ञ विद्वान् होनेके साथ-साथ पत्रकारिताके क्षेत्रमें भी सर्वोच्च कीर्तिमान् स्थापित किया। 'कल्याण' को अपने अथक परिश्रमसे शून्यसे शिखरतक पहुँचाया। उच्चकोटिके लोक-कल्याणकारी, आध्यात्मिक एवं नैतिक साहित्यको अत्यन्त अल्प मूल्यमें जन-साधारणको सुलभ कराकर सत्साहित्य-प्रचारकी दिशामें अतुलनीय कार्य किये। यद्यपि उनकी शिक्षा पारिवारिक पारम्परिक ही थी तथापि वे अनेक भाषाविद् थे। हिन्दी, संस्कृत, बँगला, गुजराती और राजस्थानी भाषापर तो उनका असाधारण अधिकार था। प्राचीनता एवं अर्वाचीनताका उनमें अद्भुत समन्वय था। समय-समयपर देशके सामने आनेवाली विविध समस्याओंको सुलझानेके लिये वे 'कल्याण' के माध्यमसे बड़े ही सुन्दर और सर्वमान्य आध्यात्मिक समाधान प्रस्तुत करते थे।

उनके द्वारा हिन्दी साहित्यको मौलिक शब्दोंका नया भण्डार मिला। उनकी गद्य-पद्यात्मक रचनायें अपने विषयकी मीलका पत्थर है। भाईजीके द्वारा विरचित १०० से अधिक पुस्तकें अबतक प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें उनके काव्य संग्रह 'पद-रत्नाकर' के अतिरिक्त, 'राधा-माधव-चिन्तन', 'प्रेमदर्शन', 'भगवान् श्रीकृष्णकी मधुर बाललीलायें', 'वेणुगीत', 'श्रीरासपञ्चाध्यायी', 'यज्ञ-पत्नियोंपर कृपा', 'व्रजभावकी उपासना', 'कालियनागपर कृपा', 'श्रीभरत चरित्र', 'रस और आनन्द', 'प्रेमका स्वरूप' तथा 'प्रेम और प्रेमी' प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त उनके गद्य-साहित्यका विपुल भण्डार है। उनकी कुछ रचनाओंका विश्वकी कई भाषाओंमें अनुवाद हुआ है। उनके द्वारा सम्पादित 'कल्याण' के ४४ विशेषांक अपने विषयके विश्वकोष हैं। हमारे आर्षग्रन्थ जो जनसाधारणके लिये अलभ्य थे उन्हें हिन्दीमें अनुवादित कराकर सर्वसुलभ कर दिये और उन्हें विपुल मात्रामें प्रकाशित करके विश्वके कोने-कोनेमें पहुँचा दिये जिससे

वे सुदीर्घकालके लिये सुरक्षित हो गये। इसीलिये बंगालके सुप्रसिद्ध संत श्रीसीतारामदास ओंकारनाथजी महाराजने लिखा—'श्रीपोद्दार बाबाके शरीर आश्रयसे हमारे प्रभुने जो अपूर्व शास्त्र-प्रचार एवं धर्म प्रचारकी लीला की है, वह न कभी हुई है और न होगी। उनके हृदयपर अधिकार करके श्रीभगवान् स्वयं ही कार्य कर रहे थे। उनके भीतर और बाहर श्रीभगवान् ही विद्यमान थे। इस प्रकारका शास्त्र-प्रचार एवं धर्म-प्रचार देहाभिमानी द्वारा नहीं हो सकता।' सनातन धर्मके शास्त्रका प्रचार और उसका दीर्घकालीन संरक्षणका उपाय प्रकारान्तरसे सनातन धर्मकी रक्षाका ही कार्य है जो भगवान्के अवतारोंके द्वारा ही होता है—'**त्वत्तः सनातनो धर्मो रक्ष्यते तनुभिस्तव**' (श्रीमद्भा० ३/१६/१८)। हिन्दी और सनातन धर्मकी उनकी सेवा युगोंतक लोगोंके लिये प्रेरणास्त्रोत रहेगी।

यद्यपि संतोंमें प्रायः अपनी साधनानुरूप कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्तियोगकी प्रधानता रहती है परन्तु भाईजीमें इन तीनोंकी पराकाष्ठाका समुच्चय था। भाईजीका समस्त जीवन एक कर्मयोगीकी भाँति बीता। वे जीवनभर कर्ममें रत रहे पर एक क्षणके लिये भी उसमें आसक्त नहीं हुए। उनकी दिनचर्यामें जहाँ एक ओर नित्य १६ से १८ घंटे निःस्वार्थ गीताप्रेसके प्रकाशनों एवं कल्याणके सम्पादनका कार्य, धर्म-ग्रन्थोंका स्वाध्याय एवं अनुशीलन, सत्संग और भगवत्सम्बन्धी प्रवचन आदि रहते, वहीं जगत्को तथा जगत्-व्यापारको सर्वथा विस्मरण कर भाव-समाधिमें लीन हो जाते थे। इस प्रकार वे नित्य नियमसे देह-धर्मका निर्वाह करते हुए भी उसके कर्मफलसे सदा मुक्त रहे। वे आत्मप्रशंसाके विरोधी और आत्मगोपन चरित्रके मूर्तिमान् स्वरूप थे। इसीलिये उन्होंने सर, रायबहादुर और भारत रत्न जैसी उपाधियोंको लेनेसे अस्वीकार कर दिया। वह उपाधियोंको व्याधि मानते थे। उन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा उनकी अमूल्य हिन्दी सेवाके सम्मानार्थ प्रदत्त 'साहित्य-वाचस्पति' की उपाधिका अपने नामके साथ कभी प्रयोग नहीं किया।

भाईजी देहाभिमानसे सर्वथा रहित थे। ज्ञानी जगत्के समस्त प्राणियोंमें आत्मानुभूति करके सबको सुख पहुँचानेकी सहज चेष्टा करनेवाला होता है—ऐसा उनका सहज स्वभाव था। भाईजी प्राणिमात्रमें अपने आराध्यका दर्शन करते थे—**'निज प्रभुमय देखहिं जगत्'**। उनके सामने अगर सफाई करनेवाली भी आ गयी तो मन ही मन उसको प्रणाम करके कहते—'इस रूपमें नाथ आप सामने खड़े हैं मैं प्रणाम करता हूँ। अब आप सफाई करेंगे। यह अभिनय आपका इस समय है और मैं इस समय ऐसा बनकर बैठा हूँ पर इस कामको करते समय भी मैं पहचान सकूँ कि आप मेरे स्वामी हैं। अभिनय होगा स्वाँगके अनुसार ही।

'जगत्में एक भगवान् ही विभिन्न रूपोंमें, विभिन्न प्रकारसे लीलायमान हैं'—इस सत्यका अनुभव ही परम ज्ञान है। भाईजी इस अवस्थामें सर्वदा-सर्वथा अवस्थित थे। इस सम्बन्धमें एक घटनाका उल्लेख करना समीचीन होगा। ३० मार्च १९३७ मंगलवारकी घटना है उन दिनों भाईजीके संरक्षणमें गीतावाटिका, गोरखपुरमें अखण्ड संकीर्तन चल रहा था। अनेक प्रान्तोंके साधुगण एवं साधक मौनी और फलाहारी लोग घास-फूसकी कुटियामें रह रहे थे। केवल भगवन्नामका उच्चारण करते, इसके अलावा और किसी शब्दका नहीं। भगवानकी सेवा-पूजा भी सब करते। रातके समय किसी कारणवश आग लग गयी। हाहाकार मच गया। आग लगनेपर भाईजी अपने कमरेसे बाहर निकलकर आये और बोले—अग्निदेवके रूपमें स्वयं भगवान् पधारे हैं। खूब घी लाओ, बूरा लाओ। भलीभाँतिसे इस रूपमें भगवान्का सत्कार करो। वैसा ही किया गया। यह सुखद आश्चर्य हुआ कि इस अग्निकाण्डमें न तो किसी व्यक्तिको जरा-सी भी चोट लगी और न ही आगकी लपटका असर हुआ।

श्रीभाईजीके लोक व्यवहारसे यह परिलक्षित होता है कि वे जीवन्मुक्त थे। जैसा कि भगवान् श्रीरामने सुतीक्ष्णजीके लिये कहा—**'त्वं ममोपासनादेव विमुक्तोऽसीह सर्वतः'** (अ०रा० ३/२/३८)। अर्थात् तुम केवल मेरी उपासनासे इस जीवितावस्थामें ही सब प्रकार मुक्त हो गये हो।

इसका संकेत उनके ग्रन्थ रत्न पद-रत्नाकरमें मिलता है—

जीवन्मुक्त नित्य रहता, करता प्रभुके गुण ग्रहण अमान।
प्रभु-इंगितसे होता रहता फिर उनका दुनियामें दान ॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११७०)

भाईजी भक्तिमार्गी थे। भक्तके जिन गुणों और कर्तव्योंका वर्णन हमारे धर्मग्रन्थोंमें मिलता है, भाईजी उसके मूर्तिमन्त रूप थे। उन्होंने गुणोंको अपने व्यक्तित्वमें मूर्तिमान् किया था और कर्तव्योंको अपने कार्यों द्वारा आचरणमें उतारा था। इसीलिये भाईजीके जीवनकालमें ही उनकी प्रतिष्ठा एवं लोकप्रियता एक सच्चे पथ प्रदर्शक संतके रूपमें हो गयी थी। जन-जनके मानस पटलपर उनके मधुर अलौकिक व्यक्तित्वका इतना अधिकार हो गया था कि वे अपनी गुप्त से गुप्त समस्याका भी समाधान भाईजीसे चाहते थे।

सतत् साधनाके द्वारा ज्ञान, भक्ति एवं योगके क्षेत्रमें सर्वोच्च सिद्धि प्राप्त करनेके बाद उनके लिये कोई कर्तव्य शेष नहीं रह गया था तथापि वे जगत्के मोहग्रस्त जीवोंके कल्याणके लिये जीवनके अंतिम क्षणतक सचेष्ट रहे। वे करुणागार थे और चाहते थे कि मुझे जो प्राप्त है वैसा ही सबको प्राप्त हो ।

गीतावाटिकामें एक सज्जन नन्दबाबाके नामसे जाने जाते थे। एक दिन वे भाईजीके पास आये। भाईजी उस समय 'कल्याण' सम्पादनका कार्य कर रहे थे। भाईजीने उनसे विनोदसे पूछा—'बाबा! आपको लोग नन्दबाबा कहते हैं पर क्या कभी आपको बालकृष्णके दर्शन हुए हैं? नन्दबाबा बोले—'भाईजी! मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ कि उस कन्हैयाके दर्शन हों।' तब आप काहेके नन्दबाबा!—भाईजीने विनोद किया। इसपर नन्दबाबाने कहा कि आप ही मुझे कन्हैयाके दर्शन करा दें। असली नन्दबाबा बना दें। तब भाईजीने दिव्य आनन्दकी लहरोंमें बहते हुए कहा—अच्छा, आप यहाँ बैठे रहें और .... मंत्रका जप करें। नन्दबाबाने ऐसा ही किया और उन्हें कुछ देर बाद भगवान्‌की दिव्य छटाके दर्शन हुए।

भाईजीकी नामजपमें अटूट निष्ठा थी। साधना क्रममें उन्हें भगवान् विष्णुके दर्शनके उपरान्त गीतावक्ता भगवान्‌के दर्शन हुए फिर वृन्दावनविहारी मुरलीधर श्रीकृष्णके। इसके बाद श्रीराधाकृष्णके दर्शनका सौभाग्य मिला। तदुपरान्त वृन्दावनकी लीलाओंका भी दर्शन होने लगा। सन् १९३३ में 'कल्याण'के 'शिवांक' सम्पादनके समय भगवान् शिव एवं १९३४ में 'शक्तिअंक' का सम्पादन करते समय भगवती शक्तिका साक्षात्कार हुआ। वस्तुतः इस समय तक भाईजीकी स्थिति अनिर्वचनीय हो गयी थी। संभवतः इसी कारणसे देवर्षि नारदने महर्षि अंगिराके साथ आकर भाईजीको दर्शन दिये, उनसे वार्ता की और गूढ़ तत्त्वोंका रहस्योद्घाटन किया जिनका शास्त्रोंमें विस्तृत विवरण नहीं है। उन्होंने कहा कि तुम विश्वभरकी आध्यात्मिक गतिविधियोंके नियामक एवं संचालक दिव्य संत-मण्डलमें सम्मिलित कर लिये गये हो। जाते-जाते उन्होंने कहा—जब कभी याद करोगे, तब हम आ जायेंगे। इसके बाद तो नारदजी आदि देवर्षिगण उनसे वार्ताके लिये पधारते रहते थे। एक बार सनकादि ऋषि भी उनके दर्शन एवं वार्ताके लिये पधारे थे।

एक बार एक वैद्यजी भाईजीके दर्शनकी इच्छासे गीतावाटिकामें आये। वे बड़े ही साधन-परायण और सन्त हृदयके व्यक्ति थे। रात बीत जानेपर दूसरे दिन उन्होंने बताया—यह वाटिका बड़ी तीर्थमयी है, यहाँका वातावरण बड़ा पवित्र है। अनेक संत-साधु अपने सूक्ष्म शरीरसे यहाँ आया करते हैं। मेरी एक प्रार्थना है कि भाईजीका प्रवचन प्रातःकाल ठीक समयसे आरम्भ कर देना चाहिये। वे संत-साधु-महात्मागण, जो सूक्ष्म शरीरसे भाईजीका प्रवचन सुननेके लिये आया करते हैं, मैंने देखा कि विलम्ब होनेसे उनको बड़ी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। यह तो बड़े सौभाग्य की बात है कि वे संत यहाँ आते हैं। जो मैंने देखा है, वही मैं कह रहा हूँ। उनको प्रतीक्षा करनी पड़ी, यह मुझे अच्छा नहीं लगा, इसलिये मैंने यह निवेदन किया है। भाईजीको अपनी क्रियाशीलतामें भी सब समय श्रीकृष्णके मुख-कान्तिके ही दर्शन होते। उन्होंने लिखा है—

रहूँ कहीं कैसे भी, रहते नित्य साथ मेरे भगवान्।
जाऊँ कहीं, वहीं दीखती मुझको उनकी मधु मूर्ति महान्॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११८९)

इतना ही नहीं उन्हें स्पर्शमात्रमें भगवत्-स्पर्शका, किसी भी गन्धमें श्रीकृष्णके अंग-गंधकी, प्रत्येक शब्दमें उन्हींका स्वर एवं प्रत्येक रसमें उनके दिव्य अधरामृतका रसास्वादन होता था।

आज मिल गया मुझे सहज ही प्रभुका मधु-मंगल वरदान।
शब्द-शब्दमें सुन पाता मैं अतः तुम्हारा ही गुण-गान॥
देख पा रहा अखिल विश्वमें रूप तुम्हारा ही अभिराम।
स्पर्श पा रहा स्पर्शमात्रमें एक तुम्हारा ही सुखधाम॥
गन्धमात्रमें पाता मैं नित अंग-गन्ध तव परम मधुर।
प्रति रसमें पा रहा तुम्हारा नित्य दिव्य रस सुधा-अधर॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११८८)

और ऐसा होना आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं उनको यन्त्रवत् संचालित कर रहे थे। भाईजीने कहा है—

'उतरे स्वयं मलिन जीवनमें मेरे परम सुहृद भगवान्'

श्रीभाईजी अहर्निश राधा-भावमें रहते थे। राधाभावमें उपासक और उपास्यमें प्रेमाधिक्यके कारण एकरूपता हो जाती है। यही कारण था कि भगवान् श्रीकृष्ण राधाजी हो जाते थे और श्रीराधा श्रीकृष्ण बन जाती थीं। उदाहरणस्वरूप गर्गसंहिताका यह श्लोक है—

श्रीकृष्ण कृष्णेति गिरा वदन्त्यः श्रीकृष्णपादाम्बुजलग्नमानसाः।
श्रीकृष्णरूपास्तु बभुवरंगनाश्चित्रं न पेशस्कृतमेत्य कीटवत्॥

अर्थात् श्रीकृष्णके नामका स्मरण करती करती और उनके चरण-कमलोंमें चित्तको लगाये हुए गोपियाँ श्रीकृष्णरूप हो गयीं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि छोटा कीट भयसे बड़ेका चिन्तन करते-करते उसीके समान हो जाता है।

भाईजीकी स्थिति कल्पनातीत थी। इसका कुछ अनुमान एक प्रसंगसे किया जा सकता है। सन् १९४३ में होलीके कुछ पूर्व भाईजीने रतनगढ़में भगवन्नाम प्रचारके लिये एक विशाल सन्त-सम्मेलनका आयोजन किया। जिसमें अन्य सन्तोंके अलावा वृन्दावनस्थित श्रीरंगजी मंदिरके प्रधान संत रघुनाथदासजी भी पधारे थे। वहाँ उन्होंने कहा—भाईजी! आपकी महिमा क्या कहूँ? आप परम भक्त हैं। इस संत सम्मेलनके लिये आपका निमन्त्रण मिला और उधर रंगजीके मंदिरमें होलीका वृहत् उत्सव। मंदिरके लोग भी आग्रह कर रहे थे कि यदि आप जायेंगे तो यहाँ मंदिरका उत्सव कौन मनायेगा? मैं बड़ी दुविधामें था। फिर स्वयं भगवान् श्रीरंगजी महाराजका आदेश हुआ कि—'रघुनाथदास! प्रत्येक वर्ष तो तुम मेरा उत्सव मनाते ही हो, इस बार तुम मेरे भक्तके उत्सवमें जाओ।' भाईजी! जिसके उत्सवमें जानेके लिये स्वयं श्रीरंगजी महाराज आदेश दें, उसकी महिमा की क्या कोई सीमा है? आपके दर्शनोंसे तो मैं धन्य हो गया।

भाईजीका जीवन इतना दिव्य और अलौकिक हो गया था कि प्राकृतिक शब्दोंके द्वारा तथा प्राकृतिक मन, बुद्धिके द्वारा वह न समझा जा सकता है और न समझानेका प्रयास ही किया जा सकता है। स्वामी चक्रधरजी महाराज—श्रीराधाबाबा जो उद्भट विद्वान् एवं अद्वैत ब्रह्मके उपासक थे एवं सगुण-साकार रूपको मायोपाधिक मानते थे उनके चरणोंका भाईजी द्वारा स्पर्शमात्रने ही बाबाको साकारोपासक बना दिया। बाबाने लिखा है—भाईजीके अनुग्रहसे ही मुझे परम तत्त्वके परमसार भगवान्के सगुण-साकार स्वरूपका अनुभव हुआ है। कर्तुम-अकर्तुम अन्यथा कर्तुम समर्थ भगवान् जिसके अधिकारमें हो, जो अपनी सत्प्रेरणासे किसीको भगवत्प्रेम दान करनेमें समर्थ हो, किसी भी मरणातुर व्यक्तिको जो हाथ पकड़कर भगवान्के दर्शन दिलाकर उसे भगवद्धामकी यात्रा करानेमें समर्थ हो, आप लोग कल्पना कर लें कि ऐसे व्यक्तिके जीवनव्यापी छायावत् संग रहनेकी मेरी कामना किस हेतुसे है। बाबाने आगे बताया कि

भाईजीका सूक्ष्म शरीर बिल्कुल प्रियाजीका स्वरूप हो गया है। भाईजीके राधारानीमें लीन होते ही स्वयं श्रीकृष्ण इस पाञ्चभौतिक शरीरके धर्मी बन गये। दूसरे शब्दोंमें समझानेके लिये कह सकता हूँ कि मान लें जैसे पाञ्चभौतिक ढाँचा दीखता है, उसके द्वारा जो व्यवहार होता है, वह तो सर्वथा उसी ढंगसे हो रहा है कि भगवान् स्वयं श्रीकृष्ण उसके अन्दर श्रीराधाकृष्णके रूपमें अभिव्यक्त हैं और फिर उनकी सर्वसमर्थाशक्तिके कारण एक ही समय भाईजीके साथ (श्रीराधारानीके साथ) सर्वथा दिव्य सच्चिदानन्दमयी लीला करते हुए भी जड़ जगत्‌के व्यवहारकी भी रक्षा करते हैं।

भाईजीने भी अपने काव्यमें इसे स्वीकार किया है। वे लिखते हैं—

इन्द्रिय-मन-मति—सभी हो गये श्यामरूप बनकर अतिधन्य।

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११२१)

× × × ×

चल रही लीला तुम्हारी, बना लीला-धाम जीवन।

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११५१)

× × × ×

लिखता-लिखवाता वही, करता-करवाता वही।
पता नहीं क्या गलत है, पता नहीं क्या है सही॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११५०)

भाईजीने स्वीकार किया है कि उनके द्वारा जो कुछ भी होता है वह सारा-का-सारा कार्य भगवान् स्वयं कर रहे हैं। न तो 'मैं' हूँ और न कुछ 'मेरा' है। यह पाञ्चभौतिक ढाँचा भी भगवान्‌ने ही अपने कामके लिये बना रखा है। इसके सब कलपुर्जे उनके नियमनमें चलते हैं। इस ढाँचेमें तो सब क्रियाएँ केवल होती दिखायी देती हैं। कर्ता कोई और है।

मेरे द्वारा होता जो कुछ करते वह सारा भगवान्।
'मैं' न रहा, 'मेरा' न रहा कुछ, कर्त्ता कौन, कहाँ अभिमान॥

ढाँचा एक बना रखा है अपने से ही अपने काम।
नियमित सब चलते कल-पुर्जे, होती दिखती क्रिया तमाम॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११८०)

भाईजीकी इस अवस्थाका कुछ अनुमान इस बातसे हो सकता है कि एक बार उन्होंने राधाबाबासे कहा था—'मैं क्या बताऊँ कि मैं आपको किस रूपमें देखना चाहता हूँ। मेरी आन्तरिक अभिलाषा है कि आपका जीवन श्रीकृष्णानुरागिणी व्रजांगनाओंके दिव्य प्रेमका साकार स्वरूप बन जाय। श्रीमद्भागवतका एक शोक है—

या दोहनेऽवहने मथनोपलेपप्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितोक्षणमार्जनादौ।
गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठोधन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः॥

मैं तो चाहता हूँ कि इस श्लोकका सत्य आपके जीवनमें चरितार्थ हो उठे। श्रीकृष्णप्रेमसे परिपूर्ण उस दिव्य जीवनका महत्त्व कुछ अद्भुत ही है।'

राधाबाबाने अपनी चर्या भाईजीके संकेतानुरूप कर ली। तभी तो आगे चलकर बाबाने लिखा है कि—"भाईजीकी अवस्था इतनी विलक्षण है कि जिस दिन हमलोगोंमेंसे कोई सचमुच भाईजीकी कृपासे गोपीभावकी साधना करके गोपी बन जायेगा, उसी दिन वह ठीक-ठीक समझ सकेगा। सुनकर भी विश्वास उसी मात्रामें होगा, जिस मात्रामें भजनके द्वारा, इनकी कृपा प्रकाशित होकर इस बातको ग्रहण करनेमें अन्तःकरण समर्थ हो सका है। यह मैं स्वयं अनुभव करता हूँ कि उत्तरोत्तर यह अनुभव विलक्षण होता जाता है। श्रीभाईजीकी स्थितिको सर्वसाधारण समझ ही नहीं सकता। उच्च साधन सम्पन्न सत्संगी भी इन बातोंको हृदयंगम नहीं कर सकता। मेरे ध्यानमें युगों-युगोंमें ऐसी उच्च आध्यात्मिक स्थितिका कोई सिद्ध भगवत्कृपापात्र आया ही नहीं है, परन्तु हुआ होगा तो मेरी जानकारीमें नहीं है। मैंने कही उल्लेख नहीं पाया है। नारद-भक्ति सूत्रोंमें महासिद्ध प्रेमी भक्त नारदजीने सिद्धान्तोंमें ऐसी स्थितिका उल्लेख अवश्य किया है। उनके सम्पर्कमें आनेवाले माया जगत्‌के सभी जीव चाहे वे मक्खी, मच्छर, पशु-

पक्षी, मनुष्य, पितर, देवगण कोई भी हों, एक-न-एक दिन तर जायेंगे। उनके प्राकृत शरीरका अस्तित्व त्रिभुवनके लिये परम पवित्र और मंगल विधान है।''

साधनामय जीवनसे भाईजीका भगवल्लीलाओंमें प्रवेश और भाव समाधि सामान्य बात थी। जीवनके अंतिम दस-बारह वर्षोंमें उनकी स्थिति बड़ी विचित्र रही। उनकी अभिलाषा और तदनुरूप प्रयास रहता कि वृत्तियाँ जगत्की सेवा कार्यमें रहें परन्तु वे बलात् पहुँच जाती थीं उस लीला राज्यमें। भाईजी जब भाव-समाधिकी वाह्यचेतना शून्य स्थितिसे चेतनामें आते तो कई बार उनके सामने कई पद लिखे मिलते। उन्होंने बताया कि ऐसे पद कभी मैंने होशमें नहीं लिखे। कौन-सी शक्ति चेतनाशून्य स्थितिमें उनकी कलमको सक्रिय करती थी यह भाव-राज्यकी बात है। भाईजीने लिखा है—

तुमने जो कहलाया मुझसे, वही कहा मैंने अविकल।
तुमने जो करवाया मुझसे, वही किया मैंने निश्छल।
तुमने जो सिखलाया मुझको, सीखा मैंने वही सकल।
तुमने जो दिखलाया मुझको, देखा मैंने वही अकल॥
यह जो कुछ भी कहा, किया, सीखा, देखा मैंने प्रियतम।
सो सब तुमने ही अपनेमें अपनी की लीला उत्तम॥
मन-मति कैसे होते मुझमें, जब मैं ही हूँ नहीं स्वयम्।
बना तुम्हारा ही सुख-सदन, तुम्हीं इसमें रहते हरदम॥

(पद-रत्नाकर, पद सं०/११४६)

भाईजीके अन्तरमें प्रकट प्रभुने जो आदर्श जगत्के समक्ष उपस्थित किया वह अन्यत्र देखनेको नहीं मिलता। वे एक साथ ही शास्त्रों और धर्मका प्रचार करनेवाले 'श्रीवेदव्यास' भी थे, आचार- विचारको सुनियन्त्रित करनेवाले मनुके समान स्मृतिकार भी थे। सरस काव्य रचनामें 'सूर-तुलसी' के समान थे और लीला-सिन्धुमें डूबे रहनेमें 'श्रीचैतन्य महाप्रभु' के समान थे। श्रीराधाष्टमी महोत्सवका प्रवर्तन एवं रसाद्वैत-राधाकृष्णके प्रति नई दिशा एवं मौलिक चिंतन इस युगको उनकी महान् देन है।

भगवान्के 'विशेष कार्य' सम्पादित करते हुए, भगवत्प्रेरणासे भाईजीने अपने जीवनके बाह्यरूपको अत्यन्त साधारण रखते हुए सबके बीच ७८ वर्ष रहे। कुछ श्रद्धालु प्रेमीजनोंको छोड़कर उनके वास्तविक स्वरूपकी कोई कल्पना भी नहीं कर सका। जो उनके निकट आये वे अपने भावानुसार इसकी अनुभूति करते रहे। किसीने उन्हें विद्वान् देखा, किसीने सेवा-परायण, किसीने आत्मीय स्नेहदाता, किसीने सुयोग्य सम्पादक, किसीने सच्चा संत, किसीने उच्चकोटिका व्रजप्रेमी और किसीको राधा हृदयकी झाँकी उनके अन्दर मिली। यद्यपि किसी संतकी वास्तविक स्थितिका अनुमान लगाना बड़ा कठिन है तथापि भाईजी निश्चित रूपसे उस कोटिके सन्त थे जिनके लिये नारदजीने कहा है—'**तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात्**'—भगवान् और उनके भक्तोंमें भेदका अभाव होता है।

भाईजीके दर्शन, स्पर्श, प्रेरणा एवं अहैतुकी कृपासे कितने लोगोंका कल्याण हुआ अथवा कल्याण पथपर अग्रसर हुए, वे परमधामके अधिकारी बने इसकी गणना सम्भव नहीं है। महाभाव रसराजके लीलासिन्धुमें सर्वदालीन रहते हुए २२ मार्च १९७१ को इस धराधामसे अपने स्थूल शरीरसे अपनी लीलाका संवरण कर लिये परन्तु अभी वे प्रेमियों के सम्मुख प्रकट होकर उन्हें दर्शन देते हैं एवं सहायता आदि भी प्रदान करते हैं। श्रीभाईजी दैवी प्रेरणासे 'विशेष कार्य' सम्पादन हेतु इस धरापर आये थे। उस कर्मको करनेके बाद गीतावाटिकामें अपने पाञ्चभौतिक कलेवरका परित्याग करके जब नित्यलीलालीन हुए उसी समय दूरस्थ कुछ संतोंको विलक्षण अनुभूतियाँ हुईं। जैसे व्रजके परमसिद्ध संत पंडित गयाप्रसादजी जिन्हें श्रीगोवर्धन गिरिका सचल रूप माना जाता था और उनकी अवस्था उस समय 90 वर्षसे अधिक थी, उनके अधरोंसे कभी अन्यथा शब्द नहीं निकलते थे। उन्होंने बताया कि भाईजीको साधारण संत नहीं मानना चाहिये। वे तो दिव्य व्रजके गोपी थे। गोपीभावसे ही उन्होंने सारे कार्य किये। जिस दिन उन्होंने पार्थिव कलेवरका परित्याग किया उस दिन सबेरे स्वयं मैंने उनको

गोपीरूपसे बरसानेकी ओर आकाश मार्गसे जाते हुए देखा था। दूसरा विलक्षण अनुभव वृन्दावनके संत श्रीबालकृष्णदासजीको हुआ। उन्होंने बताया कि २२ मार्च को प्रात: ५ बजे उन्हें अनुभव हुआ कि प्रियाजी चार सखियों सहित यमुनाजीकी तरफ जा रही हैं। श्रीप्रियाजीके पीछे एक और प्रिय सखीको चार अन्य सखियाँ ले जा रही हैं। मेरे मनमें उत्सुकता हुई कि यह सखी कौन है? ज्योंही उनके मनमें यह जिज्ञासा जाग्रत् हुई त्यों ही उस सखीके दिव्य स्वरूपसे चलते हुए भाईजीने उनकी ओर देखा और इस देखनेसे ही अपने दिव्य स्वरूपकी झलक दिखला दी। उस दिव्यानुभूतिकी परिपुष्टि तब हुई जब बादमें यह समाचार मिला कि आज प्रात: लगभग आठ बजे भाईजीने अपने पाञ्चभौतिक कलेवरका परित्याग कर दिया।

श्रीभाईजीने अपने वसीयतनामामें भावी पीढ़ियोंके लिये संकेत दे दिये हैं—'मुझमें जिनकी जरा भी श्रद्धा, प्रीति या सद्भावना हो, उनसे मेरा निवेदन है कि वे सभी नर-नारी परम सात्त्विक, त्यागोन्मुख, भगवत्सम्बन्धयुक्त जीवन बनायें। 'कल्याणकारी आचरण' नामकको पुस्तकमें मेरे जो विचार छपे हैं, उनका यथासाध्य पालन करें तो अवश्य ही उनको भगवत्कृपासे परमवस्तुकी प्राप्ति होगी।'

सबमें भगवान्‌को देखना, भगवत्कृपापर अटूट विश्वास और भगवन्नामका अनन्य आश्रयको भाईजीने अपनी अतुल सम्पत्ति लिखा है और कहा कि यह इतनी विशाल है कि असंख्य लोगोंके द्वारा इसके ग्रहण किये जानेपर भी यह कम नहीं होगी।

श्रीभाईजी अपनी मंगलमयी अहैतुकी कृपासे पाठकोंको भी अतुल सम्पत्ति प्रदान करें। इस कामनाके साथ उनके श्रीचरणोंमें शत्-शत् नमन।

'वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्'

प्रमुख शिक्षायें

मानव जीवनका एकमात्र उद्देश्य भगवत्प्राप्ति या भगवान्‌के प्रेमकी प्राप्ति है। भारतके ऋषि-मुनियोंने सुदीर्घ समाधि तथा ध्यानलब्ध दृष्टिसे सुखका अनुसंधान किया और उसे पाया एकमात्र नित्य सत्य सनातन पूर्ण भगवान्‌में या ब्रह्ममें। इसीसे उन्होंने एकमात्र भगवत्प्राप्ति या ब्रह्म-संस्पर्शको ही सुख माना है। इसीलिये भारतीय मानव-समाजने अपना लक्ष्य भोग न मानकर भगवान्‌को माना है।

× × × ×

सर्वभूतहित-वृत्तिका होना ही मानवताकी सूचना है और इसीके विकासमें मानवताका विकास है। यही मानव-धर्म है।

× × × ×

जिस कार्यसे परिणाममें अपना और दूसरेका हित होता है वही धर्म है।

× × × ×

सत्य एक है, भगवान् एक है। उन्हीं एकको अपनी-अपनी रुचिके अनुसार भिन्न प्रकारसे पूजा होती है। हमारे ही राम कहीं विष्णुरूप, कहीं कृष्णरूपसे, कहीं देवीरूपसे, कहीं ब्रह्मभावसे, कहीं खुदाके नामसे, कहीं गणेश, सूर्य, बुद्ध, ईसा, अहुरमज्द और कहीं परमपिता आदिके नामसे पूजित होते हैं। मतलब यह कि दूसरा कोई महेश्वर है ही नहीं। ऐसा मान लेनेपर कहीं कोई झगड़ा नहीं रहेगा। हमसब उसे भिन्न-भिन्न रूपोंमें पूजकर उसके ही महत्त्वको बढ़ा रहे हैं। हमारे प्रियतमके उपासक भक्त, सेवक होनेसे सभी हमारे प्रिय हैं, सभी हमारे आत्मीय हैं। इसी प्रकारके सत्य और शुद्ध विचारोंसे दूसरेके मतोंको सहन करना चाहिये।

× × × ×

जगत्‌के प्राणियोंमें सद्भावोंको, भगवद्भावोंको जाग्रत् करके उनको बढ़ाना, उन्हें भगवान्‌की ओर लगाना ही जगत्‌की सबसे बड़ी सेवा है।

× × × ×

जिस कार्यके परिणाममें दूसरोंका अहित होता है, उससे अपना हित होता ही नहीं और जिससे दूसरोंका परिणाममें हित होगा, उससे अपना हित निश्चय ही होगा। अतएव सुख चाहते हो तो अपने प्रत्येक विचार तथा कर्मके द्वारा दूसरोंका हित सोचो और करो।

× × × ×

जहाँ-जहाँ अपने मनके प्रतिकूल हो, जो चीज अपनेको बुरी लगती हो, दूसरेके साथ वह न करें।

× × × ×

भगवान्‌की प्राप्ति दुर्लभ नहीं, सहज है और निःसन्देह होती है—इस सिद्धान्तपर विश्वास होना चाहिये। भगवत्प्राप्तिमें विश्वास और प्राप्तिकी दृढ़ इच्छा इन दो ही चीजोंकी आवश्यकता है।

× × × ×

अपना कल्याण चाहनेवाला व्यक्ति नामका आश्रय पकड़ ले। जिस प्रकार अग्निमें दाहिका शक्ति स्वाभाविक है उसी प्रकार भगवन्नाममें पापको, विषय प्रपंचमय जगत्‌के मोहको जला देनेकी शक्ति है। भगवन्नाम पापोंका नाश करके ही शान्त नहीं हो जाता। पापका नाश करनेके बाद हृदयमें ज्ञानकी ज्योति पैदा करता है, ज्ञानके बाद भगवान्‌के प्रति प्रेम उत्पन्न करता है। यह हुआ कि फिर स्वयं नामी खिंच आते हैं।

× × × ×

भगवत्कृपा अनन्त और अपार है। वह सभी प्राणियोंपर सभी परिस्थितियोंमें बरसती है। जो उसपर विश्वास करता है, वह सर्वथा समभावसे सबको प्राप्त होनेवाला उस कृपाका अनुभव कर सकता है। जिसका मन अविश्वास तथा संदेहके अन्धकारसे ढका है उसे परम रहस्यमयी अहैतुकी कृपाके दर्शन नहीं होते।

× × × ×

'केवल श्यामसुन्दर ही मेरे और मैं केवल श्यामसुन्दरका ही' इस अनन्य भावको लेकर श्रीकृष्णसे जो नित्य सम्बन्ध हो जाता है, वह है— गोपीप्रेम।

× × × ×

गोपी बननेके लिये तीन बातें होनी चाहिये—अपने मनसे जगत्को निकाल देना, भगवान्को देनेके लिये मनको तैयार कर देना और किसी भी कारणसे किसी भी हेतुको लेकर कहीं पर भी अटकनेकी भावना न करना।

× × × ×

इहलौकिक और पारलौकिक दुःखोंसे छुटकारा पाकर नित्य अखण्ड परमानन्दकी प्राप्तिके लिये भगवान्की शरणागति ही मुख्य उपाय है।

× × × ×

दूसरोंसे वही बर्ताव करना, जैसा हम दूसरोंसे चाहते हैं। हम जैसा बर्ताव करेंगे, बदलेमें हमें वही अनन्त रूपमें मिलेगा। अपना कोई अनिष्ट होता है, तो वह अपने प्रारब्धसे ही होता है, दूसरा उसमें निमित्त भले ही बने। अतएव दूसरेके द्वारा कभी अपना बुरा होता दीखे तो उसपर क्रोध न करके दया करना क्योंकि वह अज्ञानवश हमारा बुरा करने जाकर अपना ही बुरा कर रहा है।

× × × ×

ईश्वरके अस्तित्वमें कभी संदेह न करो। जगत्का अस्तित्व ही उसके अस्तित्वको सिद्ध करता है। जगत्को स्वीकार करना और भगवान्को अस्वीकार करना वैसा ही है जैसे सोनेके गहनेको स्वीकार करते हुए सोनेको अस्वीकार करना।

× × × ×

व्यक्तिके सुधारसे ही समाजका सुधार होगा। यदि प्रत्येक व्यक्ति विशुद्ध चरित्र, सात्त्विक गुणप्रधान, प्रेमपूर्ण-हृदय, परार्थ-त्यागी और संयमी हो जाय तो सारा विश्व स्वयमेव ही ऐसा बन जाय।

× × × ×

'सब कुछ भगवान् हैं'—इसपर विश्वास करके व्यवहारमें जो भी स्त्री-पुरुष, प्राणि-पदार्थ सामने आवें, उन्हें भगवान्‌के रूपमें देखकर मन-ही-मन प्रणाम किया जाय तो थोड़े दिनोंमें यह वृत्ति हमारे संस्कारगत हो जायेगी और हमें सब समय भगवान्‌के दर्शन होने लगेंगे। जो मनुष्य संसारके सब प्राणियोंमें भगवान्‌को देखता है उसे सबमें भगवान् दीखते हैं।

श्रीभाईजीकी साधन-समितिके नियम

वैशाख शुक्ल ४, सं० १९८४ (५ मई, १९२७) को भाईजीने सात-आठ प्रेमीजनोंके सामने कहा कि साधकोंको साधन करनेके लिये कुछ नियम बनाकर उनका पालन करना अत्यावश्यक है। बिना साधनके शान्ति नहीं मिलती। अत: आपलोग तैयार हों तो एक साधन समिति बनाकर उसके सदस्योंके लिये कुछ नियम बनाये जायँ। नियमोंका पालन आदरपूर्वक कड़ाईके साथ किया जाय, जिससे मानव जीवनके लक्ष्यकी प्राप्ति शीघ्र हो। सब लोग सहर्ष राजी हो गये। परामर्शके बाद पन्द्रह नियम और बारह उपनियम बनाये गये। वे नियम इस प्रकार थे—

१. आहार—नमकके सिवा अन्य सब मसालोंका त्याग, भोजन अधिक-से-अधिक पाँच वस्तुओंके द्वारा बना होना चाहिये। जैसे—(१) आटा या चावल (२) घृत (३) दाल (४) नमक (५) साग या दूधमेंसे कोई एक वस्तु।

२. वस्त्र—अपने पहननेके लिये देशी सूतके हाथसे बुने हुए अधिक-से-अधिक चार वस्त्र (लंगोटा और अंगोछाके अतिरिक्त)

३. जप—प्रतिदिन कुछ भी खानेसे पहले तीन माला 'हरे राम' षोडश नामवाले महामंत्रकी अवश्य तथा सोनेसे पहले कुल १४ माला पूरी कर लें।

४. सदाचार—क्रोध सर्वथा न करे और क्रोधकी कोई क्रिया तो सर्वथा न होने पावे।

५. ब्रह्मचर्य—अपनी धर्मपत्नीसे एक महीनेमें एक बारसे अधिक स्त्री सहवास न होने पावे।

६. उपासना—नित्यप्रति नियत समय तथा नियत स्थानपर एक घंटेके लिये प्रार्थनामें अवश्य उपस्थित हों।

७. आदेश—समितिके आदेश बिना किसी प्रश्नके अवश्य पालन करें।

१. समितिके आदेशानुसार प्रायश्चित करना।

२. समितिकी बात बिना आज्ञा किसीसे प्रकट न करना।

८. श्रीमद्भगवद्गीताके एक अध्यायका अर्थ समझते हुए पाठ करना।

९. सन्ध्या, गायत्री तथा स्वाध्याय नियमपूर्वक करना। संध्या तथा तर्पणमें कम-से-कम आधे घंटेतक एक आसनपर बैठकर श्रद्धा और आदरपूर्वक पंचपात्रोंके द्वारा संध्या करना। संध्या प्रात:काल एवं सायंकालके उत्तम समयपर ही करना।

१०. प्रार्थनाके लिये नित्य प्रति आधे घंटे एकान्तमें रहना।

११. सत्य भाषण—भूतकाल एवं वर्तमान कालके वचन जान करके असत्य न बोलना।

१२. कम-से-कम पाँच मिनट व्यायाम नित्य करना।

१३. श्रीभगवान्‌को सर्वत्र देखनेकी चेष्टा करना जिन-जिनसे व्यवहार करना हो उनमें विशेषरूपसे भगवान्‌को देखना।

१४. श्रीभगवान्‌को प्रत्येक पन्द्रह मिनटपर स्मरण और स्मरण होनेपर न भूलनेकी चेष्टा करना।

१५. नियमोंकी डायरी नित्यप्रति सोनेसे पहले भरना।

उपनियमः नियमोंके अतिरिक्त उपनियम भी ये थे—

१. दंभ न करना,

2. मन, वाणी और कर्मसे किसीका अनिष्ट न करना,

3. दिल्लगीका त्याग,

४. अधिक न बोलना,

५. मादक वस्तुओंका त्याग,

६. सबसे प्रेम करना,

७. जाति, वर्ण, धर्म, देशके विचारोंसे तथा बीमारीके कारण किसीसे घृणा न करना,

८. दूसरोंके दोष न देखना,

९. शारीरिक परिश्रम करना,

१०. जहाँतक बने अपना काम स्वयं करना,

११. किसीसे सेवा न कराना,

१२. नीचे लिखे गये अवसरोंमें भगवत् स्मरण करना-प्रातः उठते समय, निद्रा लेते समय, स्नान करते समय, कुल्ला करते समय, भोजन करते समय, जल पीते समय।

'भाईजीका वस्तुगुण इतना अधिक है कि जो प्राणी इनके संस्पर्शमें आये, आयेंगे सबके सब भगवान्‌को इस जन्ममें या एक और (केवल एक और) जन्म धारण करके अपनी इच्छाके अनुसार भागवती गति प्राप्त करेंगे। ×××भाईजीसे सम्बद्ध समस्त प्राणी कृतार्थ हो जायेंगे, निश्चय हो जायेंगे।'

—श्रीराधा बाबा

गीतावाटिका एक तीर्थ

'तीर्थी कुर्वन्ति तीर्थाणि'। (ना०भ०सू० ६९) यह क्या चीज है? महात्मा लोग जिन स्थानोंपर रहे, वहाँ देवाराधन हुआ, भगवच्चर्चा हुई, संतोंके ज्ञान सत्र हुए वहाँ-वहाँ पर वायुमण्डलमें, जलमें, आकाशमें, धूलिकणोंमें, वृक्षोंमें सब जगह एक महान् सात्त्विकता भर गयी। उस सात्त्विकताने उस भूमिको, उस जलको वहाँके वातावरणको पवित्र करनेवाला बना दिया तो उसका नाम हो गया 'तीर्थ'। गीतावाटिका ऐसा ही एक तीर्थस्थल है जो गोरखपुर रेलवे स्टेशन से लगभग तीन किमी० दूर स्थित है। गीतावाटिका भाईजीकी तपोभूमि है जहाँ वे 35 वर्षकी दीर्घकालीन तपश्चर्या, ऋषि-मुनियोंकी तरह सात्त्विक और समर्पित जीवनसे सतत साधनारत रहे।

भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक, 'कल्याण', गीताप्रेस, गोरखपुरके एकान्त निवासके लिये गीतावाटिकाको क्रय किया गया था। श्रीभाईजी वैशाख पूर्णिमा सं० १९९१ वि० (सन् १९३४) से यहाँ रहने लगे थे। तबसे अनेकों संत, महात्मा, साधक, विद्वान् व साहित्यकार उनके साथ रहे और यहींसे 'कल्याण'का सम्पादन कार्य होता। सन् १९३६ में यहाँ एक वर्ष पर्यन्त अखण्ड कीर्तन हुआ जिसमें देशभरसे संत महात्मा पधारे थे। तबसे यहाँकी शोभा निराली-दिव्य हो गयी।

यहाँका वातावरण शान्ति प्रदायक है। वाटिकामें स्थित राधा कृष्ण साधना मन्दिर नागर शैलीमें निर्मित एक विशाल भव्य मन्दिर है जिसमें भगवान् श्रीराधाकृष्ण, श्रीसीताराम, श्रीशंकर पार्वतीके अलावा श्रीगणेशजी, हनुमानजी, भगवान् सूर्यदेव, माँ दुर्गा, भगवान् विष्णु-लक्ष्मी एवं माँ त्रिपुरसुन्दरीकी भव्य मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। साथ ही अनवरत प्रार्थनारत श्रीभाईजी एवं उनकी जीवनसंगिनी माँ रामदेई पोद्दारकी मूर्ति है। इनकी शास्त्रोक्त रीतिसे नित्य पूजा अर्चना होती है। सायंकालीन आरती बहुत ही भव्य होती है जिसमें भक्तगण सोल्लास भाग लेते हैं। मन्दिरके पार्श्वमें अखण्ड संकीर्तन मण्डप है जहाँ भाईजी द्वारा प्रारम्भ किया गया नाम संकीर्तन सन् १९६८ से अनवरत चलता रहता है जिससे वातावरण बड़ा ही सात्त्विक रहता है। मन्दिरके पीछे वह स्थल है जहाँ भाईजीको देवर्षि नारदजी एवं महर्षि अंगिराके

दर्शन हुए थे। आजकल उस स्थानपर एक सुन्दर मन्दिर बना है जिसमें देवर्षि नारदजी एवं महर्षि अंगिराकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। यह स्थान साधकोंको आकर्षित करता है।

मन्दिरके दाहिनी ओर भाईजीकी पावन समाधि है। जिस चबूतरेपर भाईजीके नश्वर शरीरका अंतिम संस्कार हुआ था, वहीं उनके पार्थिव शरीरके अवशेष सुरक्षित हैं। उन्हें एक सुन्दर पारदर्शी आवरणसे आच्छादित कर दिया गया है जिससे वर्षा आदिका उनपर कोई प्रभाव न हो सके। बगलमें माँकी समाधि एवं राधा बाबाकी समाधि है। बाबाकी समाधिको एक मन्दिरका रूप दे दिया गया है। जिसमें उनकी मूर्ति प्रतिष्ठित है जो अनवरत भाईजीके समाधिको निहारा करती है। यह इस बातका स्मरण कराती है कि बाबा भाईजीके स्वरूपको समझकर जिस प्रकार उनको सचल वृन्दावन मानकर उनके संग रहनेका अखण्ड व्रत ले लिये थे यहाँतक कि भाईजीके समाधिके पास ही अपना शेष जीवन व्यतीत करनेका निश्चय कर रखे थे। भाईजीकी समाधिके बगलमें बाबा द्वारा स्थापित श्रीगिरिराज परिक्रमा है, जहाँ आज भी भक्तगण परिक्रमा करते रहते हैं।

मंदिरके प्रांगणमें स्थित भवनमें वह पावन कक्ष है जिसमें प्रस्फुटित दिव्य वाणीको समग्र विश्वमें हिन्दू धर्म, संस्कृति तथा तत्त्वविवेचनकी गरिमाको पुनः प्रतिष्ठित करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। वर्षोंतक प्रायः १८ घंटे प्रतिदिन साधनामें रत रहनेवाले कर्मयोगी, दिव्य भगवत्प्रेमकी रसधारा बहानेवाले प्रेमी भक्त एवं माँ भारतीके ज्ञानकोषको अक्षय बनानेवाले ज्ञान वारिधिने इसमें निवास किया है। इस कक्षमें भाईजीको अपने परमाराध्यके अगणित बार दर्शन हुए हैं, प्रेमालाप हुआ है और प्रिया-प्रियतमकी रसमयी मधुर लीलामें नित्य निमज्जित रहते थे। इस कमरेमें भाईजी द्वारा उपयोगमें लायी गयी सामग्री सुरक्षित है जिसके दर्शनके लिये लोग दूर-दूरसे आते हैं।

श्रीराधाबाबाने कहा है—'इस गीतावाटिकाकी महिमा श्रीवृन्दावन धामके समान ही है। इसमें ३५ वर्षोंसे अधिक कालतक रसराज महाभावके युगमरूपसे भावित श्रीपोद्दार महाराजने निवास किया है। संतरूपमें जो लीला श्रीपोद्दारजीके शरीरमें बैठकर नन्दनन्दन श्रीकृष्णने की है और उस शरीरसे सम्बन्धित जो एक-एक वस्तु है, उनके कार्यके उपयोगमें आनेवाली छोटी-से-छोटी और बड़ी-से-बड़ी जो सामग्री है, वह सब व्रज-भावापन्न है। वह उनके बादमें भी हमें उपलब्ध हो रही है। यह भूमि भी ज्यों-की-त्यों विद्यमान है, जिसके कण-कण उनके पद-चिह्नोंसे अंकित हैं।'

भाईजीके पावन कक्षसे निकलनेवाली 'प्रसीदमें नमामि ते पदाब्ज भक्ति देहि में' की वाणी आगन्तुकोंको शान्ति प्रदान करके उन्हें प्रेमाभक्तिके मार्गपर अग्रसर होनेके लिये प्रेरित करती रहती है।

गीतावाटिकामें भाईजी प्रवर्तित राधाष्टमी महोत्सव धूम-धामसे मनाया जाता है। जिसमें सम्मिलित होनेके लिये सुदूर स्थानोंसे भक्त, साधकगण आते हैं। आगन्तुकोंकी सुविधा हेतु व्यक्तिगत अतिथि भवन हैं।

हमारे अन्य पवित्र स्थान

पावन कोठी (रतनगढ़, चुरु)—यह राजस्थान में स्थित पूज्य भाइजीका पैतृक स्थान है। इसी कोठीमें वर्षों पूज्य भाईजीका जीवन व्यतीत हुआ और वर्षों तक 'कल्याण' सम्पादकीय विभाग यहाँ रहा। अनेक संत, विद्वान्, साहित्यकार एवं साधकगण उनके साथ यहाँ रहे। श्रीराधाष्टमी महोत्सव एवं अनेक महोत्सव यहाँ हुए हैं जिसका साक्षी उनका 'नोहरा' पावन कोठी है। अभी भी यहाँ समय-समय पर उत्सव एवं सत्संग चलते रहते हैं।

डालमिया कोठी, स्वर्गाश्रम (ऋषिकेश): पतित पावनी गंगाजीके तटपर यहाँ पूज्य भाईजी वर्ष के करीब २-३ महीने अपने 'कल्याण' सम्पादकीय विभाग के साथ रहते थे तथा 'गीताभवन' में पूज्य भाईजीका नियमित सत्संग होता था। जिसे अनेक संत, महात्मा, विद्वान्, साधकगण चावसे उनके प्रवचनको सुनते थे। कई वर्षोंसे वहाँ पावन कक्षमें पूजन तथा अखण्ड कीर्तन आदि निरंतर चलता है।

श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार अन्ध विद्यालयः दुर्गाकुण्ड, वाराणसीमें स्थित यह अन्ध विद्यालय उत्तर प्रदेशमें अपना स्थान रखता है। करीब ३५ वर्षोंसे यह लोगोंकी सेवामें संलग्न है। यहाँ समय-समय पर सत्संग, कथा, कीर्तन, भण्डारा इत्यादि धार्मिक तथा सामाजिक कार्य होते रहते हैं।

जगन्नाथपुरीः भगवान् श्रीजगन्नाथजीके मंदिरके एक दरवाजे पर पूज्य श्रीभाईजी द्वारा विरचित षोडशगीत मंदिर है। यहाँ भी पूजन आदि बराबर चलता है।

रश्मि-पुञ्ज

मुझे जो कुछ लाभ हुआ, उसमें संत-कृपाके साथ-साथ तीन चीजोंकी प्रधानता है—

१— सबमें भगवान्‌को देखना,

२— भगवत्कृपापर अटूट विश्वास,

३— भगवन्नामका अनन्य आश्रय

यही मेरी 'अतुल सम्पत्ति' है और यह इतनी विशाल है कि असंख्य लोगोंके द्वारा इसके ग्रहण किये जानेपर भी यह कम नहीं होगी। आप जो कोई मेरे यथार्थ उत्तराधिकारी बनना चाहें, सबमें भगवान्‌को देखकर सबका हित-सुख-सम्पादन तथा सम्मान करें, निरन्तर बरसनेवाली भगवत्कृपाकी अहैतुकी अनन्त सुधा-धारामें सराबोर रहें और अनन्य निष्ठा-विश्वासके साथ भगवन्नाम जप-कीर्तन करते रहें। ये तीनों करेंगे तो अवश्य ही पारमार्थिक लाभ होगा।

विश्वास करो—भगवान् परम आश्रय है; चाहे सारा संसार तुम्हें भूल जाय, चाहे घर-परिवारके सभी तुमसे मुख मोड़ लें, चाहे तुम सर्वथा निराश्रय हो जाओ, एक बार हृदयसे उनके परम आश्रयत्वपर विश्वास करके मन-ही-मन उनका स्मरण करो। देखोगे, तुम्हें कितना शीघ्र और कितना मधुर और निश्चित आश्रय मिलता है।

विश्वास करो—भगवान् सर्वशक्तिमान हैं। तुम्हारा दुःख चाहे कितना ही प्रबल हो, तुम्हारे संकट चाहे कितने ही पहाड़-जैसे हों और तुम्हारी विपत्ति चाहे किसीसे भी न टलनेवाली हो, भगवान्‌की शक्तिके सामने सभी तुच्छ हैं। तुम विश्वास करके सर्वशक्तिमानको पुकारो—उनकी शक्ति अविलम्ब तुम्हारी सहायता करेगी और तत्काल तुम्हारे पहाड़-से दुःख कष्ट काजलके ढेरकी तरह उड़ जायेंगे।

याद रक्खो—तुमपर भगवान्‌की कृपा नित्य-निरन्तर बरस रही है; वह सदा, सब ओरसे तुम्हें नहला रही है। ऐसा कोई क्षण नहीं जाता, जिस समय तुम भगवान्‌की कृपासे वञ्चित रहते हो। वञ्चित रहते भी कैसे? तुम उनकी अपनी प्यारीसे प्यारी रचना जो ठहरे! तुमपर वे कृपा क्या करते; उनके हृदयमें तो पल-पलमें स्नेह उमड़ा आता है। सचमुच विश्वास करो—जबसे तुम हुए—न जाने किस अज्ञातकालसे—तभीसे उन्होंने तुम्हें अपनी गोदमें ले रखा है। एक क्षणके लिये भी कभी उन्होंने तुमको दूर नहीं किया। उनका कल्याणमय कर-कमल निरन्तर तुम्हारे सिरपर रहता है और निरन्तर तुम उनका शीतल-मधुर स्पर्श पा रहे हो।

विश्वास करो—तुम दीन-हीन नहीं हो; तुम शुद्ध-बुद्ध हो, तुम अमृत हो, तुम महान हो; तुम्हारे अंदर परमात्माकी शक्ति भरी है, तुम चाहो तो सब कुछ कर सकते हो। तुम भगवान्‌के प्यारे हो, तुममें इस बातका विश्वास नहीं है, यही कमी है। दृढ़ विश्वास करो और भगवान्‌के प्यारको प्रत्यक्ष पाकर परम सुखी हो जाओ। स्मरण रक्खो, आत्मविश्वास ही सफलताकी कुञ्जी है, विजयका मूल-मन्त्र है और परमात्माकी कृपाको खींचनेवाला चुम्बक है।

विश्वास करो—जगत्‌में ऐसी कोई चीज नहीं, ऐसा कोई स्थान नहीं, ऐसी कोई विद्या नहीं, ऐसी कोई स्थिति नहीं—जिसे तुम नहीं पा सकते। आत्मशक्तिपर विश्वास करो—दृढ विश्वास करो, अडिग निश्चय करो; फिर देखो, सफलता तुम्हारे चरणोपर लोकती है। तुम्हारे मनकी चीजें तुम्हारे पास आनेमें ही अपने जीवनको सफल समझती हैं। तुम्हारी आत्मशक्तिके आगे कुछ भी असम्भव नहीं है।

जबतक तुम जगत्‌के पदार्थोंको अपना मानते रहोगे, उनमें ममत्व रखोगे, तबतक कभी निश्चिन्त नहीं हो सकोगे; ये नाशवान्, क्षणभंगुर, परिवर्तनशील पदार्थ कभी तुम्हें निश्चिन्त नहीं होने देंगे। इनपर से ममत्व

और आसक्तिको हटा लो; ये जिनकी चीजें हैं, उन्हें सौंप दो। बस, जहाँ तुमने इनको भगवान्‌के समर्पण किया कि वहीं निश्चिन्त हो गये; फिर न नाशका भय है, न अभावकी चिन्ता है और न कामनाकी जलन है।

सुख चाहते हो, दूसरोंको सुख दो; मान चाहते हो, मान प्रदान करो; हित चाहते हो, हित करो और बुराई चाहते हो तो बुराई करो। याद रखो, जैसा बीज बोओगे, वैसा ही फल मिलेगा। फलकी न्यूनाधिकता जमीनके अनुसार होगी।

दीन-हीन, सरल, असहाय बच्चे माँको ज्यादा प्यारे हुआ करते हैं; भगवान् रूपी जगज्जननीको भी उसके गरीब बच्चे अधिक प्रिय हैं। इसलिये यदि तुम माताका प्यार पाना चाहते हो तो माताके उन प्यारे बच्चोंसे प्रेम करो, उन्हें सुख पहुँचाओ; माता आप ही प्रसन्न होकर अपना वरद-हस्त तुम्हारे मस्तकपर रख देगी; तुम सहज ही कृतार्थ हो जाओगे।

याद रक्खो—तुम्हारे पास जो कुछ है, सब भगवान्‌का है और भगवान्‌की सेवाके लिये ही है। उसे अपना मानकर उसका केवल अपने भोगमें उपयोग करना बेईमानी है। इस बेईमानीसे बचो और समस्त प्राप्त साधनोंको भगवान्‌की सेवामें लगाओ।

याद रक्खो—सबमें भगवान् हैं। समस्त जीवोंके रूपमें भगवान् ही अभिव्यक्त हैं। अतएव उनके जिस किसी रूपको, जब भी जिस वस्तुकी आवश्यकता हो और वह यदि तुम्हारे पास हो तो 'भगवान्‌की वस्तु भगवान्‌के अर्पण कर रहे हो'—इस भावसे बिना अभिमानके नम्रतापूर्वक उसे समर्पण कर दो।

याद रक्खो—सच्ची सेवा करनेवाला जगत्‌में सदा-सर्वत्र- सबमें भगवान्‌के दर्शन करता है। सेवा करना उसका स्वभाव ही है। वह ऊँच-नीच, अपना-पराया, मित्र-शत्रु नहीं देखता। उसे जब सेवाका अवसर मिलता है, तब वह अपना सौभाग्य समझता है।

याद रक्खो—सेवाका न विज्ञापन होता है, न दूकान खुलती है। सेवा सेवकका सहज स्वभाव होता है। सेवाका अभिप्राय है—अपने पास जो कुछ भी साधन सामग्री-तन-धन, विद्या-बुद्धि आदि हैं, और जो कुछ भी शक्ति है, वह सब सेवाके लिये है और सेवामें ही विनयपूर्वक किसी प्रकारकी कामना न रखते हुए उनका उपयोग करना।

याद रक्खो—अभिमान भगवान्‌से दूर करता है और दैन्य भगवान्‌के चरणोंमें पहुँचा देता है।

दूसरोंके पापोंका प्रकाश करनेके बदले सुहृद् बनकर उनको ढको। सूई छेद करती है, पर सूत अपनी शरीरका अंश देकर भी उस छेदको भर देता है। इसी प्रकार दूसरोंके छिद्रोंको भर देनेके लिये अपना शरीर अर्पण कर दो छिद्र न करो। धागा बनो, सूई नहीं।

याद रक्खो—किसी गरीबके सामने गर्वभरी वाणी बोलना, उसके साथ रूखा और कठोर व्यवहार करना भगवान्‌का अपराध है; क्योंकि उस गरीबके रूपमें भगवान् ही तुम्हारे सामने प्रकट हैं। अतएव सभीके साथ नम्र होकर मधुर वाणी बोलो; अपनी विनय-विनम्र पीयूषवर्षिणी वाणी तथा व्यवहारके द्वारा सर्वत्र शीतल मधुर-सुधाकी धारा बहा दो; दुःखकी विष-ज्वालासे जलते हुए हृदयोंमें सुधा ढालकर उन्हें विषशून्य, शीतल, शान्त और मधुर बना दो और यह सब करो केवल भगवान्‌की सेवाके लिये और करो सब कुछ उन्हींकी शक्ति, प्रेरणा और वस्तु मानकर। तुम्हारी निरभिमान त्यागमयी सेवासे भगवान् बड़े प्रसन्न होंगे और उनकी प्रसन्नता तुम्हारे जीवनको परम सफल बना देगी।

बदला लेनेकी भावना कभी मनमें मत आने दो। अपना बुरा करनेपर, गाली देनेपर, निन्दा करनेपर, मारनेपर भी किसीका कभी न बुरा करो, न बुरा चाहो, न बुरा होते देखकर प्रसन्न होओ; उसको हृदयसे क्षमा कर दो। जैसे स्वयंके अपराधपर व्यक्ति अपनेको दण्ड देना नहीं

चाहता—क्षमा चाहता है, ऐसे ही सबमें अपने आत्माको समझकर सबको क्षमा करो। बदला लेनेकी भावना बहुत बुरी है। बदला लेनेकी भावना मनमें रखनेवाला मनुष्य इस जीवनमें कभी शान्ति, सुख और प्रेम नहीं पाता तथा मरनेपर पिशाच होता है। वह स्वयं डूबता है और वैरभावके बुरे परमाणु वायुमण्डलमें फैलाकर दूसरोंका भी अनिष्ट करता है।

दुःख मनुष्यत्वके विकासका साधन है। सच्चे मनुष्यका जीवन दुःखमें ही खिल उठता है। सोनेका रंग तपनेपर ही चमकता है।

याद रक्खो—अनिच्छा या परेच्छासे जो कुछ भी फल तुम्हें प्राप्त है, वह भगवान्के मंगल-विधानसे ही होता है। उसके विपरीत कभी इच्छा न करो, उसमें कभी असंतुष्ट मत होओ; पर भगवान्का मंगल-प्रसाद समझकर उसे सिर चढ़ाओ। भगवान्से कभी कोई माँग करनी हो, कुछ चाहना हो तो बस, केवल यही माँगो, यही चाहो कि 'मंगलमय भगवान्, तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो। तुम्हारी इच्छाके विपरीत मेरी कोई इच्छा हो ही नहीं और कदाचित् कभी कुछ हो जाय तो उसे पूरी मत करना।

याद रक्खो—तुम्हें जब दूसरेके द्वारा जरा-सी भी कष्ट मिलता है, तब तुम्हें कितना दुःख होता है! इसी प्रकार उसे भी होता है। इसलिये कभी भूलकर भी किसीके अनिष्टकी भावना ही न करो। ईश्वरसे सदा यह प्रार्थना करते रहो कि 'हे भगवान्! मुझे ऐसी सद्बुद्धि दो, जिसमें मैं तुम्हारी सृष्टिमें तुम्हारी किसी भी संतानका अनिष्ट करने या उसे दुःख पहुँचानेका कारण न बनूँ।' सदैव सबकी सच्ची हित-कामना करो और यथासाध्य सेवा करनेकी वृत्ति रक्खो। कोढ़ी, अपाहिज, दुःखी-दरिद्रको देखकर यह समझकर कि—'यह अपने बुरे कर्मोंका फल भोग रहा है। जैसा किया था, वैसा ही पाता है', उसकी उपेक्षा न करो, उससे घृणा न करो और रूखा व्यवहार करके उसे कभी कष्ट न पहुँचाओ। वह चाहे पूर्वका कितना पापी क्यों न हो, तुम्हारा काम उसके पाप देखनेका नहीं है, तुम्हारा कर्त्तव्य तो अपनी शक्तिके अनुसार उसकी भलाई करना तथा उसकी सेवा करना ही है।

भूल जाओ—तुम्हारे द्वारा किसी प्राणीकी कभी कोई सेवा हो जाय तो यह अभिमान न करो कि मैंने उसका उपकार किया है। यह निश्चित समझो कि उसको तुम्हारे द्वारा बनी हुई सेवासे जो सुख मिला है, वह निश्चय ही उसके किसी शुभ कर्मका फल है; तुम तो उसमें केवल निमित्त बने हो। ईश्वरका धन्यवाद करो, जिसने तुम्हें किसीको सुख पहुँचानेमें निमित्त बनाया और उस प्राणीका उपकार मानो, जिसने तुम्हारी सेवा स्वीकार की।

दूसरोंके द्वारा तुम्हारा कभी कोई, अनिष्ट हो जाये ता उसके लिये दुःख न करो; उसे अपने पहले किये हुए कर्मका फल समझो। यह विचार कभी मनमें मत आने दो कि अमुकने मेरा अनिष्ट कर दिया है। यह निश्चय समझो कि ईश्वरके दरबारमें अन्याय नहीं होता है। तुम्हारा जो अनिष्ट हुआ है या तुमपर जो विपत्ति आयी है, वह अवश्य ही तुम्हारे पूर्वकृत कर्मका फल है।

वे ही शतदल-चरण हमारे हृदय-पटलपर रहें जड़े!

जिन चरणोंकी मङ्गलकारी कृपा अहैतुकके द्वारा,
राधा-माधव-लीलाकी शुभ हुई प्रवाहित रस-धारा।
पीकर जिसे, नहाकर जिसमें, केवल दर्शन कर जिसका,
झूम रहा है, झूमेगा युग-युगतक श्री-परिकर सारा॥

जिन चरणोंके नख चन्द्रोंसे तमका पट जा दूर पड़ा,
जन्म-जन्मसे मोह-जाल बन नयनोंपर जो था जकड़ा।
खुले आज, कुछ कल उन्मीलित; कुछ उसके भी अगले दिन,
लोचन होंगे, झलक उठेगा, राधारानीका मुखड़ा॥

जिन चरणोंके स्नेह-सिन्धुके भीतर रह, उसमें पलकर,
अनायास मूँगा मोती बन गये रेत-चूना पत्थर।
इन प्रवाल-मुक्ताओंको उस मञ्जूषामें वास मिला,
रत्न जड़े जाते जिसमेंसे ले राधाके पायलपर॥

जिन चरणोंके नीचे पनपे, हुए बड़े हम, हुए खड़े,
उन चरणोंकी ही छायामें रज राखीमें रहें पड़े।
जिन चरणोंने हम दीनोंको राधाका दासत्व दिया,
वे ही शतदल-चरण हमारे हृदय-पटलपर रहें जड़े॥

****

श्रीभाईजीके अमृतोपदेश

भगवान्

१. भगवान्की प्राप्ति इच्छासे होती है।

२. भगवान् प्राप्त होनेपर कभी बिछुड़ते नहीं।

३. भगवान्की प्राप्ति जब होती है, पूरी होती है।

४. भगवान्को प्राप्त करनेकी इच्छा होते ही पापोंका नाश होने लगता है।

५. भगवान्को प्राप्त करनेकी साधनामें शान्ति मिलती है।

६. भगवान्का स्मरण करते हुए मरनेवाला सुख-शान्तिपूर्वक मरता है।

७. भगवान्का स्मरण करते हुए मरनेवाला निश्चय ही भगवान्को प्राप्त होता है।

भोग

१. भोगोंकी प्राप्ति कर्मसे होती है, इच्छासे नहीं होती।

२. भोग बिना बिछुड़े कभी रहते नहीं।

३. भोगोंकी प्राप्ति सदा अधूरी ही होती है।

४. भोगोंको प्राप्त करनेकी इच्छा होते ही पाप होने लगते हैं।

५. भोगों को प्राप्त करनेकी साधनामें अशान्ति बढ़ती है।

६. भोगोंका स्मरण करते हुए मरनेवाला अशान्ति और दुःखपूर्वक मरता है।

७. भोगोंका स्मरण करते हुए मरनेवाला निश्चय नरकों में जाता है।

****



गीतावाटिका प्रकाशन

पो०-गीतावाटिका, गोरखपुर-273006
फोन : 9336400267,8853145452
E-mail : gitavatikap@gmail.com *Website: www.gitavatika.com*

जीवन-चरित्र सम्बन्धी

१. भाईजी पावन स्मरण ५००
(सम्पादक-महामहोपाध्याय श्रीगोपीनाथजी कविराज)

२. श्रीभाईजी एक अलौकिक विभूति ९०
(पू०भाईजी एवं पू० श्रीसेठजीकी संक्षिप्त जीवनी)
(संयोजक-श्रीश्यामसुन्दरजी दुजारी)

३. श्रीभाईजी कथामृत (लेखक-श्रीगम्भीरचन्दजी दुजारी) २००

४. श्रीभाईजी प्रेमामृत (लेखक-श्रीगम्भीरचन्दजी दुजारी) २००

५. श्रीभाईजी-सरस संवाद २००
(लेखक-श्रीगम्भीरचन्दजी दुजारी)

६. भाईजी चरितामृत ५०
(पू० भाईजीके शब्दोंमें उनके जीवन प्रसंग)
(संयोजक-श्रीश्यामसुन्दरजी दुजारी)

७. दो अध्यात्मिक विभूतियोंके प्रेरक प्रसंग २०
(पू० श्रीसेठजी एवं पू० श्रीभाईजीके कुछ संस्मरण)

पूज्य श्रीभाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार द्वारा लिखित पुस्तकें

श्रीमद्भागवत सम्बन्धी

१. भगवान् श्रीकृष्णकी मधुर बाललीलायें २५०
२. श्रीरासपञ्चाध्यायी ३५
३. वेणुगीत ३५
४. यज्ञ पत्नियोंपर कृपा ३०
५. कालियनागपर कृपा ३०
६. उद्धव-गोपी संवाद (भ्रमर-गीत सहित) ४०

प्रवचन एवं लेख आदि

७. प्रभुको आत्मसमर्पण ३०
८. समाज किस ओर जा रहा है ३०
९. रस और आनन्द ३०
१०.प्रेमका स्वरूप ३०
११.व्रज-भावकी उपासना ३०
१२.श्रीभरत-चरित्र ३०
१३.भगवत्कृपा १५
१४.प्रेम और प्रेमी ३०
१५.सुखी होनेके उपाय ४०
१६.नित्य-उत्सव ३०
१७.मधुरोपासना ३०
१८.प्रेमके अंकुर ३०
१९.सत्संग-प्रवाह ३०
२०.प्रेमका साधन ३०
२१.भगवत्प्रेम ४०

पत्र सहित्य

२२. साधकोंके पत्र ४०
२३. सरस पत्र ३०
२४. अन्तरङ्ग वार्तालाप ४०
२५. शान्तिकी सरिता २५
२६. मेरे चरित्रनायक ४०
२७. श्रीकृष्ण-भाव संचय ५०
२८. मधुर पत्र ४०

अन्य साहित्य

२९. नित्य स्मरणीय अमृत वचन(दैनिक कैलेंडर) १००
३०. क्या, क्यों और कैसे ५०
३१. सरस प्रसंग ३०
३२. परमार्थकी पगडंडियाँ ४०
३३. सत्संगवाटिकाके बिखरे सुमन ४०
३४. श्रीशिव-चिन्तन ३०
३५. श्रीदेवी-चिन्तन एवं कुछ उपयोगी मंत्र ३०
३६. पारमार्थिक एवं लौकिक सफलताके सरल उपाय २५
३७. मेरी अतुल सम्पत्ति १५
३८. श्रीराधा-जन्माष्टमी व्रत महोत्सव १०
३९. गीति-संग्रह १५
४०. अमृत निर्झर ४०
४१. श्रीराधा-माधव-रस-सुधा (षोडशगीत टीका सहित) २०
४२. पूर्वराग ३०
४३. प्रेम वैचित्त्य ४०

पू० भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार द्वारा सम्पादित पुस्तकें

१. श्रीराधागुणगान	३०	८. भारतीय संत	३०
२. भगवन्नाम एवं प्रार्थनाके चमत्कार	३०	९. संत दर्शन	३०
३. भगवत्कृपाके अनुभव	३०	१०. भक्ति रहस्य *(पं०श्रीगोपीनाथजी कविराज)*	३५
४. भगवत्कृपाके चमत्कार	३०	११. भक्त और भगवान *(श्रीअक्षयकुमार वन्द्योपाध्याय)*	३५
५. योग एवं भक्ति	३०	१२. निश्चिन्त हो रहो *(श्रीभूपेन्द्रनाथ सान्याल)*	३५
६. रोगोंके सरल उपचार	५०	१३. जैसा बीज वैसा फल	३०
७. भारतीय नारी	३०	१४. व्रज-भाव	३०

पू० श्रीराधाबाबाका साहित्य

१. केलीकुंज	१००	४. महाभागा व्रजदेवियाँ	३०
२. आस्तिकताकी आधार शिलायें	५०	५. परमार्थके सरगम	३०
३. मेरे प्रियतम	३०		

अन्य साहित्य

१. दिव्य हस्तलिखित संकेत ५०

(पू०सेठजी, पू०भाईजी, पू०स्वामीराम-सुखदासजी एवं पू० राधाबाबाके पत्र)

२. श्रीकृष्ण जन्माष्टमी महोत्सव १५

(संकलनकर्ता—श्रीचिम्मनलालजी गोस्वामी)

३. पद-रत्नाकर—एक अध्ययन ३०

(लेखक-श्रीश्यामसुन्दरजी दुजारी)

गीतावाटिका की अन्य पुस्तकें

१. कहौ तो को पतियाय ६००

(पू० श्रीभाईजी एवं पू० श्रीराधाबाबाके प्रसंग)

लेखिका- श्रीमतीराधादेवी भालोटिया

२. रस तरंगणी ४०

(पद-रत्नाकरके पदोकी व्याख्या)

पू० श्रीचिम्मनलालजी गोस्वामी द्वारा सम्पादित

३. समर्पित जीवनकी लोक यात्रा २५

(श्रीचिम्मनलालजी गोस्वामी)

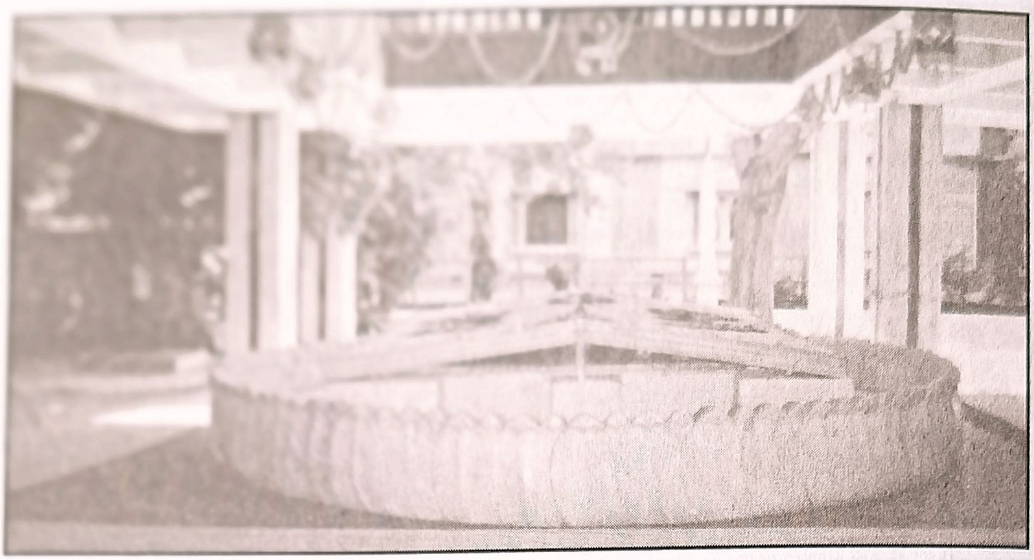
४. अनुग्रहमयी अम्बा १५

(श्रीरामदेई पोद्दार)

५. गीताके परम प्रचारक १०

(पूज्य सेठजीके जीवन-प्रसंग)

आप गीता वाटिका के वेबसाइट, व्हाट्सएप्प, ईमेल एवं गीता वाटिका आकर पुस्तक प्राप्त कर सकते हैं।



परम पूज्य श्रीभाईजी की पावन समाधि के सम्बन्ध में पूज्य बाबा की प्रत्यक्ष अनुभूति

व्रजेन्दनन्दन प्रभु श्रीपोद्दारजी महाराजके पाञ्चभौतिक कलेवरकी भस्मीभूत कणावलियाँ चिताकी राख नहीं, अपितु प्रत्यक्ष चित् वृन्दावन है। इसके अणु-अणु, परमाणु-परमाणुमें झलझल कर रही है। व्रजकुलचन्द्रमा एवं भानुनृपदुहिताकी नील-पीत-द्युति।

मेरा अखण्ड विश्वास है कि कदाचित् अचिन्त्य-सौभाग्यवश कोई अधिकारी दर्शन प्राप्त कर लेगा इन चिन्मय अवशेषोंके तो उसे अविलम्ब प्राप्ति हो जायेगी, व्रजभावकी! अपनी-अपनी भावभूमिके अनुसार ही उपलब्धिकी गरिमा रहेगी अवश्य--परन्तु इसके अमोघ वस्तुगुणके समक्ष रीता तो कोई रह ही नहीं सकता। योग्य-अयोग्यका पार्थक्य नहीं है बीज वपनकी इस अहैतुकी कृपामें!! अतः भूमिके न रहनेपर भावमसृण-भूमिका निर्माण हो जायेगा, भावभूमि होनेपर अंकुर प्रस्फुटित हो उठेंगे, अंकुर होंगे तो द्रुमका रूप ग्रहण करने लगेंगे, द्रुम क्रमशः पल्लवित-पुष्पित हो जायेंगे और अन्तमें उन्मीलित होकर ही रहेगा -नित्य चिन्मय भाव साम्राज्यका द्वार!!!

मैं सत्य-सत्य कह रहा हूँ-इन भस्म-कणों के दर्शनमात्रसे, इन समाधिकी सच्चिन्मयी सत्ताके भावबहुल क्षेत्रमें प्रवेशमात्रसे; कालके प्रवाहमें-एक दिन उस श्यामल अनुरक्तिमें पर्यवसान परम सुनिश्चित सत्य है।

राधा राधा राधा राधा राधा